ISSN 2815-8326

हिंदी त्रैमासिक

पहचान

देश से हम, हमसे देश

लोक पर्व विशेषांक

वर्ष 2 | अंक 4 | अप्रैल - जून 2024 | पृष्ठ संख्या 32

प्रधान संपादक : प्रीता व्यास

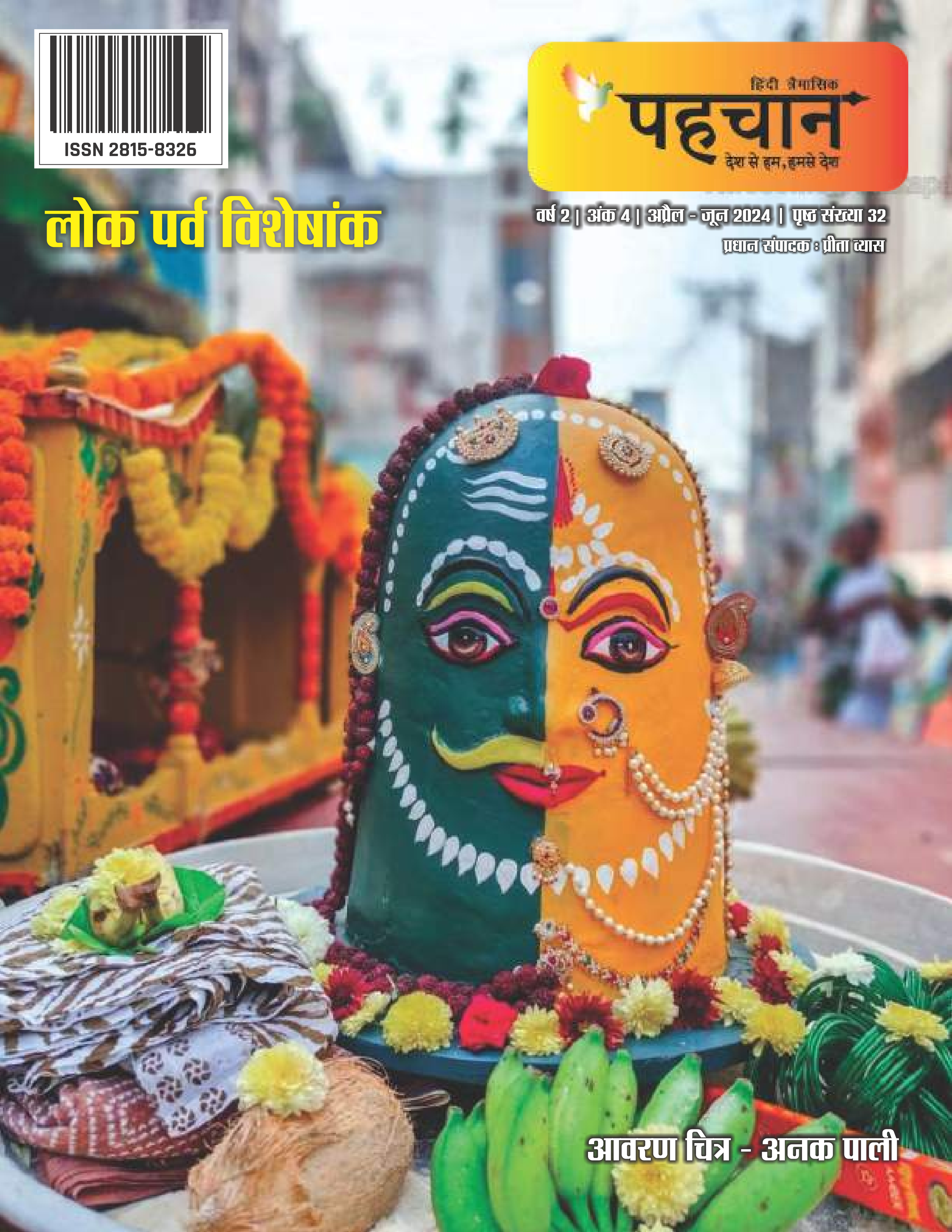

आवरण चित्र - अनक पाली

BEST
CONSTRUCTION
BETTER
HOME
ArchPoint Ltd
ARCHPOINT LTD
You Dream, We make the Dreams True!
Our Best Services:
PROVIDING END-TO-END RESOURCE CONSENT, EPA AND BUILDING CONSENT SERVICES
FEASIBILITY STUDIES - PRE & POST PURCHASE OF YOUR PROPERTY
ARCHITECTURAL DESIGNING
PLANNING & PROJECT MANAGEMENT
SURVEYING
GEOTECHNICAL INVESTIGATIONS & REPORTS
CIVIL ENGINEERING FOR INFRASTRUCTURE DESIGNING
STRUCTURAL ENGINEERING
engineering new zealand
LICENSED BUILDING PRACTITIONER
BUILDING CONFIDENCE
PMI
NEW ZEALAND CHAPTER
ADNZ
Professional Member
64 21848 552
archpoint.co.nz
GODWIN-AUSTEN
GODWIN-AUSTEN
You Wish, We bring the wishes to Reality!
Our Best Services:
Subdivisions & Building Construction on Turn Key Basis
Land and Home Packages
Design & Build
10 Years Master Builder Guarantee
Auckland Wide Operations
mb
MASTER BUILDERS
PMI
NEW ZEALAND CHAPTER
64 21889 918 OR 64 21848 552
godwinausten.co.nz

हिंदी त्रैमासिक
पहचान
देश से हम, हमसे देश

संस्थापक/ प्रधान संपादक
प्रीता व्यास

सलाहकार संपादक
रोहित कृष्ण नंदन

सहयोगी संपादक
माला चौहान

ले आउट/ ग्राफिक्स
Design n Print, India

कवर पेज
अनक पाली

प्रकाशक
पहचान
आकलैंड, न्यूज़ीलैंड
editor@pehachaan.com

पत्रिका में प्रकाशित लेख, रचनाएं, साक्षात्कार लेखकों के निजी विचार हैं, उनसे प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं. रचनाओं की मौलिकता के लिए लेखक स्वयं जिम्मेवार है. कुछ चित्र और लेखों में प्रयुक्त कुछ आंकड़े इंटरनेट वेबसाइट से संकलित किये गए हो सकते हैं.

दो शब्द

लोक मानस के, भाव के, चिंतन के और लोक संस्कार के युगीन हस्ताक्षर हैं लोक पर्व. हर लोक पर्व किसी न किसी तौर पर प्रकृति से जुड़ता है. कहीं वह नई फसल के आने पर मनाया जाता है, कहीं ऋतु परिवर्तन पर, कहीं पशुओं से जुड़ता है, कहीं, नदी-ताल-तलैया को समेटता है, कहीं ईश्वर तत्व और जगत तत्व के मेल को व्याख्यायित करता है. कुल मिलाकर कहा जाए तो प्रकृति के मान और महत्व की स्वीकारोक्ति हैं लोक पर्व.

भारत में इतनी सांस्कृतिक विविधता है कि बहुधा एक प्रदेश के वासी दूसरे प्रदेश के बहुतेरे पर्व, संस्कारों से अनजान रह जाते हैं. कई बार हैरानी होती है कि अरे! इस पर्व की, उत्सव की तो जानकारी थी ही नहीं. जब देश में रहते हुए हम बहुतेरी बातों से अनजान रह जाते हैं तो फिर विदेशों में जो बसे हैं उनको तो जानकारी मिलना और भी मुश्किल है. इस विशेषांक की सोच के मूल में यही चाह थी कि इन अनोखे लोक पर्वों की जानकारी लोगों तक पहुंचाई जा सके हालांकि तीस बत्तीस पन्नों में सारे पर्व तो समेटे नहीं जा सकते.

एक पूरी की पूरी पीढ़ी है (खासतौर पर विदेशों में बसने वाली) जो अब अपनी संस्कृति और त्योहारों के बारे में बस उतना ही जानती है जितना बॉलीबुड दिखाता है. नवरात्रि यानि डांडिया, दीवाली यानि कैंडल एंड क्रेकर्स, करवाचौथ, होली, राखी बस लिस्ट ख़त्म. कोई बहुत जानकार होगा तो गणपति स्थापना फिर फ़िल्मी गानों पर देर रात जागना और विसर्जन जानता होगा, गणेश चतुर्थी शायद ही जानता हो.

मन में कहीं ये कचोट होती है कि इन्हें सावन, कजरी, मामुलिया, नौरता, गणगौर, तीज, हरछठ, पुत्री पूजन, फूलदेई, सोहराय, आसमाई, संतान सप्तमी, गोवर्धन पूजा (अन्नकूट), नंदाष्टमी, बिरुड़ पंचमी, हरेला, नवरोज, तुलसी विवाह, गंगा दशहरा, बटसावित्री, अनंत चतुर्दशी आदि की जानकारी नहीं है, ये सब समय के साथ विलुप्त हो जाएंगे क्या? कहीं तो इनके बारे में बताया जाना चाहिए.

प्रकृति, समस्त जीवजंतु, आपसी प्रेम और सामाजिक एक जुटता की नींव पर सजते इन लोक पर्वों का आनंद ही अलग है. ऐसे समय में इनका महत्व और भी बढ़ जाता है जब हम इस संकट के सामने खड़े हैं जहां पर्यावरण का परिवर्तन पृथ्वी को अंत की ओर घसीट रहा है, प्रकृति को सम्हालने की, सहेजने की, उससे जुड़ने की हमारी ज़िम्मेदारी इस समय दुगनी हो गई है. लोक पर्व विशेषांक आपको सौंप रही हूं इस विश्वास के साथ कि आपको इसका हर लेख, हर जानकारी रोचक भी लगेगी, महत्वपूर्ण भी, संग्रहणीय भी.

इस अंक के साथ अपने शैशव का दूसरा वर्ष 'पहचान' ने पूरा किया है. आप सब का साथ, सहयोग, आशीर्वाद इसी तरह मिलता रहे. यही मेरा बल है. जुड़िये और जुड़े रहिये.

प्रीता व्यास

इस अंक में...

पाठकीय प्रतिक्रियाएं		5
लोक पर्व		
गणगौर	महिमा सोनी	6-7
सोहराय : पशुओं के प्रति आभार प्रकट करने का त्योहार	सुजाता कुमारी	8-9
बसंत का पहला दिन है नवरोज	शोभा भारद्वाज	10-11
सतुआन	ध्रुव नारायण गुप्त	12
रक्कस बाबा	रजनी अरजरिया	12
बुंदेलखंड का नौरता	वंदना अवस्थी दुबे	13-14
पुतरी पूजन	प्रवीणा त्रिपाठी	15
हरछठ	शरद कोकास	16-17
कविता		
छठ	ओम राजपूत	18
सावन के मायने	सुनील श्रीवास्तव	19
देव उठ गए	मधु सक्सेना	20
ईशरा! अंदर आओ	सुभाष तराण	21
व्यक्तित्व		
बुंदेली के महाकवि ईसुरी को कैसे पढ़ें ?	डॉ. के. बी. एल. पाण्डेय	23-24
बाल जगत		
पहेलियां	डॉ. कमलेन्द्र कुमार	25
पुस्तक समीक्षा		
प्रेम में होना	भारती पाठक	26
लघुकथा के विविध आयाम -एक ज़रूरी किताब	अंजू खरबंदा	27
सामाजिक और संवैधानिक मूल्यों की समझ बनाती पुस्तक	पूजा सिंह	28
फिल्म		
शार्ट फिल्म : यादों में गणगौर		29

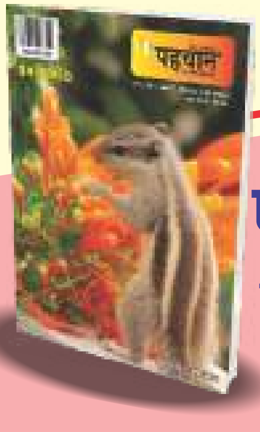

पाठकीय प्रतिक्रियाएं

आकलैंड (न्यूज़ीलैंड) से माननीय प्रीता जी के संपादन में प्रकाशित 'पहचान' त्रैमासिकी की वेबसाइट एवं जनवरी-मार्च 24 प्रेम विशेषांक पढ़ने का सौभाग्य मिला. आपका सामग्री चयन बहुत अच्छा है. पत्रिका और वेबसाइट दोनों का आरूप मन मोह लेता है. इस आयोजन के लिए आपको हार्दिक बधाइयां और शुभकामनाएं.

धर्मपाल महेंद्र जैन, भारत

ये इतनी स्तरीय सामग्री देती है कि हर बार अगले अंक की उत्कट प्रतीक्षा रहती है. साधुवाद.

कृष्ण उपाध्याय, मलेशिया

ये हमारे मन की पहचान है
हमारी विशेषता को समेटे,
हमारे संस्कारों को सहेजे
ये 'पहचान' हमारी शान है.

संगीता पटेल, न्यूज़ीलैंड

मुझे ग़ज़लें पढ़ना बहुत अच्छा लगता है, मैं लिखती भी हूं लेकिन भेजने में संकोच कर रही हूं. जनवरी-मार्च 2024 के अंक में के.पी. अनमोल, सतपाल ख्याल और बलवान सिंह 'आज़र' की गज़लें बहुत पसंद आईं. सतपाल ख्याल का एक शेर कोट कर रही हूं 'सच को सूली पे चढ़ा देते हैं दुनिया वाले, इस ज़माने के हैं दस्तूर पुराने कितने.'

सूफी रस्तोगी, आस्ट्रेलिया

हिंदी में पढ़ना बहुत धीरे हो पता है लेकिन मुझे पसंद है. आपकी मैगज़ीन के लिए शुभकामनाएं. बहुत नई चीजें मिलती हैं जानने को. इंडिया तो वैसे भी मेरे सपनों का देश है, कौन जाने कब जाने का संयोग बने.

रवीन मालाराव, फीजी

पत्रिका सराहनीय है. चित्र, सामग्री, सभी श्रेष्ठ. ये तो और भी सुखद है कि इतनी अच्छी हिंदी की पत्रिका हिन्दुस्तान से नहीं विदेश से निकल रही है. आपकी पत्रिका से दुहरी आस जुड़ गई है. पहली ये कि इसमें अपने देश की बातें भरपूर मिलेंगीं और दूसरी ये कि इसमें विदेशों की विशेषताएं, चर्चाएं, वहां के सुख-दु:ख का लेखा-जोखा भी मिलता रहेगा. सैल्यूट है आपको प्रीता मैम.

गोविंद प्रसाद अशांत, भारत

कृपया एक लघु कथा विशेषांक भी निकालिये. आपके पहले अंक में दो लघु कथाएं शामिल थीं. मैं लघु कथाओं पर एक प्रोजेक्ट कर रही हूं. मुझे आपसे बड़ी उम्मीदें हैं.

नीलिमा झा, भारत

ऑनलाइन पत्रिकाओं की भीड़ में 'पहचान' की एक बिल्कुल अलग पहचान बन रही है. कहीं-कहीं इसे पढ़ते हुए धर्मयुग और साप्ताहिक हिंदुस्तान का युग याद आने लगता है. मुझे पत्रिका में शामिल सभी आलेख बहुत प्रभावी लगते हैं. इसी तरह उच्च स्तरीय सामग्री अपने पाठकों को देती रहें.

नीलमणि बुधौलिया, भारत

'पहचान' का जनवरी-मार्च 24 अंक अनायास देखने में आया. विदेश से हिंदी की इतनी अच्छी पत्रिका प्रकाशित हो रही है, बहुत ही सुखद लगा. विचारोत्तेजक संपादकीय से लेकर निहित सारी सामग्री स्तरीय है. मुझे लगता है थोड़ा प्रचार-प्रसार आवश्यक है. हिन्दी की सेवा में आपका प्रयास स्तुत्य है. आपकी यात्रा निरंतर जारी रहे, शुभकामनाएं.

डॉ. अखिलेश शर्मा, भारत

गणगौर

महिमा सोनी

गणगौर राजस्थान का प्रमुख त्यौहार है. सभी विवाहित स्त्रियां और कुंवारी कन्याएं इस त्यौहार को बहुत ख़ुशी और उल्लास के साथ मनाती हैं. गणगौर का त्यौहार भगवान शिव और माता पार्वती को समर्पित है. इसमें गण का अर्थ भगवान शिव है और गौर का अर्थ गौरी मतलब माता पार्वती है. सोलह दिन का यह त्यौहार चैत्र मास के पहले दिन से शुरू होता है और चैत्र मास के शुक्ल पक्ष के तीसरे दिन पर समाप्त होता है. कुंवारी कन्याएं गणगौर की पूजा एक अच्छा और कुशल वर प्राप्ति के लिये करती हैं तो वहीं विवाहित स्त्रियां यह पूजा अपने पति की लम्बी आयु, अच्छे स्वास्थ्य और समृद्धि के लिये करती हैं. नव विवाहित स्त्रियों के लिये यह पूजा और व्रत पूरे सोलह दिन करना आवश्यक होता है. कई गांवों और शहरों में सोलह से अट्ठारह दिनों तक गणगौर मेला भी लगता है जो इस त्यौहार की रौनक, रंगत और उमंग को और बढ़ा देता है.

गणगौर पूजा

गणगौर पूजा में लकड़ी के ईसर (गण) और गौरा जी को बिठाया जाता है. जिन घरों में लकड़ी की प्रतिमाएं नहीं बिठाई जा सकतीं वहां कागज़ पर ही चांद, सूरज और स्वस्तिक के साथ ईसर और गौरा जी बनाए जाते हैं. सर्वप्रथम ईसर और गौरा जी का नई पोशाक, काजल, बिंदी, कुमकुम आदि से श्रृंगार किया जाता है. गौरा जी को चूड़ी, बिंदी, सिंदूर और अन्य सुहाग की चीज़ें अर्पित की जाती हैं. कई स्त्रियां आटे के आभूषण भी बनाती हैं. एक कागज़ पर हर स्त्री द्वारा कुमकुम, काजल और मेंहदी की सोलह-सोलह बिंदियां लगाई जाती हैं. प्रसाद में 16 या 32 मीठे और नमकीन गुने बनाकर चढ़ाए जाते हैं. दोनों हाथों में घास की पूड़ी ले कर ईसर गौरा जी को सोलह

बार जल अर्पित किया जाता है. पूजा करते समय सभी सुहागनें मिलकर साथ में गणगौर के पारंपरिक गीत गाती हैं. पूजा समाप्त हो जाने के बाद कई तरह के खेल भी खेले जाते हैं और आपस में गुने बदले जाते हैं.

गणगौर व्रत की कथा

गणगौर की व्रत कथा के मुताबिक, एक बार भगवान शिव और माता पार्वती वन में गए. चलते-चलते वे दोनों बहुत ही घने वन में पहुंच गए. तब माता पार्वती ने भगवान शिव से कहा कि हे भगवान ! मुझे प्यास लगी है. इस पर भगवान शिव ने कहा कि देवी देखो उस ओर पक्षी उड़ रहे हैं उस स्थान पर

गणगौर के कुछ राजस्थानी पारंपरिक गीत -

* भंवर म्हाने पूजन दो गिनगौर
* गौर ए गणगौर माता
* बाड़ी वाला बाड़ी खोल
* ईसर दास जी तो बागो पहने
* मोती समदरिया में

अवश्य ही जल मौजूद होगा.

पार्वती जी वहां गईं, उस जगह पर एक नदी बह रही थी. पार्वती जी ने पानी की अंजलि भरी तो उनके हाथ में दूब का गुच्छा आ गया. जब उन्होंने दूसरी बार अंजलि भरी तो टेसू के फूल उनके हाथ में आ गए और तीसरी बार अंजलि भरने पर ढोकला नामक फल हाथ में आ गया.

इस बात से पार्वती जी के मन में कई तरह के विचार उठने लगे परंतु उनकी समझ में कुछ नहीं आया. उसके बाद भगवान शिव शंभू ने उन्हें बताया कि आज चैत्र शुक्ल तीज है. विवाहित महिलाएं आज के दिन अपने सुहाग के लिए गौरी उत्सव करती हैं. गौरी जी को चढ़ाए गए दूब, फूल और अन्य सामग्री नदी में बहकर आ रहे थे.

इस पर पार्वती जी ने विनती की कि हे स्वामी दो दिन के लिए आप मेरे माता-पिता का नगर बनवा दें. जिससे सारी स्त्रियां वहीं आकर गणगौर के व्रत को करें और मैं खुद ही उनके सुहाग की रक्षा का आशीर्वाद दूं.

गणगौर का एक लोक गीत

खेलण द्यो गिणगोर
भंवर म्हाने पूजन दो दिन चार
ओजी म्हारी सहेल्यां जोवे बाट
भंवर म्हाने खेलण द्यो गिणगोर.

माथा ने मेंमद ल्याव
आलिजा म्हारे माथा ने मेंमद ल्याव
ओजी म्हारी रखड़ी रतन जड़ाव आलिजा
म्हाने खेलण द्यो गिणगोर.

मुखड़ा ने बेसर ल्याव
भंवर म्हाने मुखड़ा ने बेसर ल्याव
ओजी म्हारी चुंपा रतन जड़ाव
भंवर म्हाने खेलण द्यो गिणगोर.

हिवड़ा ने हारज ल्याव
आलीजा म्हारे हिवड़ा ने हारज ल्याव
होजी म्हारी हंसली उजल कराय
आलिज़ा म्हाने खेलण द्यो गिणगोर.

बहियां ने चुड़लो ल्याव
भंवर म्हारे बहियां ने चुड़लो ल्याव
ओजि म्हाने गजरां सूं मूजरो कराय
भंवर म्हाने खेलण द्यो गिणगोर.

पगल्यां ने पायल ल्याव
आलिजा म्हाने पगल्यां ने पायल ल्याव
होजी म्हारा बिछिया रतन जड़ाव
आलिज़ा म्हाने खेलण द्यो गिणगोर.
खेलण द्यो गिणगोर.

भगवान शंकर ने ऐसा ही किया. थोड़ी देर में ही बहुत सी स्त्रियों का एक दल आया तो पार्वती जी को चिंता हुई और वो महादेव जी से कहने लगी कि हे प्रभु मैं तो पहले ही उन्हें वरदान दे चुकी हूं अब आप अपनी ओर से सौभाग्य का वरदान दें.

पार्वती जी के कहने पर भगवान शिव ने उन सभी स्त्रियों को सौभाग्यवती रहने का वरदान दिया. भगवान शिव और माता पार्वती ने जैसे उन स्त्रियों की मनोकामना पूरी की, वैसे ही भगवान शिव और गौरी माता इस कथा को पढ़ने और सुनने वाली कन्याओं और महिलाओं की मनोकामना पूर्ण करें.

गौरा जी की विदाई

त्यौहार के अंतिम दिन गौरी ईसर जी को नई पोशाक और आभूषण पहना कर उनका श्रृंगार किया जाता है. शाम को, सूर्यास्त के बाद उन्हें खिलाया-पिलाया जाता है और फ़िर प्रतिमाओं को सिर पर रख कर या फ़िर गोद में उठाकर, पारंपरिक विदाई गीत गाते हुए जुलूस निकला जाता है और किसी तालाब या बावड़ी में उन्हें बहा कर विदा कर दिया जाता है. घर लौट कर सभी स्त्रियां अपना व्रत खोलती हैं. इस तरह सोलह दिनों का यह पर्व अति हर्षोल्लास के साथ पूर्ण होता है. ■

सोहराय : पशुओं के प्रति आभार प्रकट करने का त्योहार

सुजाता कुमारी

दीवाली के दूसरे दिन जब शेष भारत गोवर्धन पूजा करता है, उसी दिन से आदिवासियों का सोहराय पर्व प्रारंभ हो जाता है. पांच दिनों तक चलने वाले इस पर्व का संबंध सृष्टि की उत्पत्ति से जुड़ा हुआ है. आदिवासी समाज के इस महान पर्व को लेकर झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, ओड़िशा आदि राज्यों में बहुत पहले से तैयारी प्रारंभ हो जाती है.

जनजातीय समाज में इस पर्व का बेहद महत्व है. जनजातीय समाज इस पर्व को उत्सव की तरह मनाता है. आदिवासी समाज की संस्कृति काफी रोचक है. शांत चित्त स्वभाव के लिए जाना जाने वाला आदिवासी समुदाय मूलतः प्रकृति पूजक है.

आदिवासियों में सोहराय पर्व की उत्पत्ति की कथा भी काफी रोचक है. इसकी कथा सृष्टि की उपत्ति से जुड़ी हुई है. आदिवासी समाज में प्रचलित कथा के अनुसार, जब मंचपुरी अर्थात् मृत्यु लोक में मानवों की उत्पत्ति होने लगी, तो बच्चों के लिए दूध की जरूरत महसूस होने लगी. उस काल खंड में पशुओं का सृजन स्वर्ग लोक में होता था.

जनजातीय कथा के अनुसार, मानव जाति की इस मांग पर मरांगबुरु अर्थात् आदिवासियों के सबसे प्रभावशाली देवता स्वर्ग पहुंचे और अयनी, बयनी, सुगी, सावली, करी, कपिल आदि गायों से एवं सिरे रे वरदा बैल से मृत्यु लोक में चलने का आग्रह किया. (यहां बताना यह जरूरी है कि शेष भारतीय समाज मरांगबुरू को शिव के रूप में देखता है, लेकिन जन जातीय समाज में मरांगबुरू का स्थान शिव से भी ऊपर है.) मरांगबुरू के कहने पर भी ये दिव्य जानवर मंचपुरी आने से मना कर देते हैं, तब मरांगबुरू उन्हें कहते हैं कि मंचपुरी में

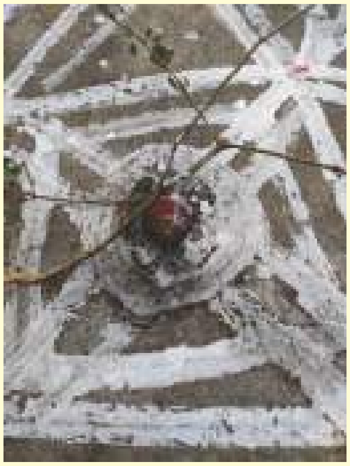

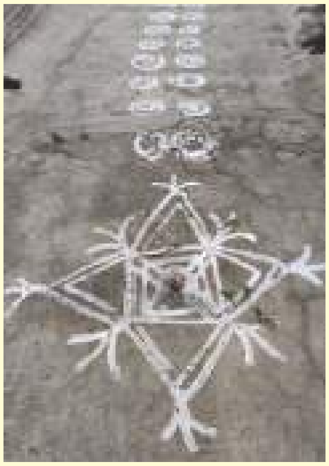

मानव युगों-युगों तक तुम्हारी पूजा करेगा. तब वे दिव्य, स्वर्ग वाले जानवर मंचपुरी आने के लिए राजी होकर धरती पर आते हैं और उनके आगमन से ही इस त्योहार का प्रचलन प्रारंभ होता है. जाहिर है उसी गाय-बैल की पूजा के साथ सोहराय पर्व की शुरुआत हुई है. पर्व में गायबैल की पूजा आदिवासी समाज काफी उत्साह से करते हैं.

मुख्य रूप से यह पर्व छह दिनों तक मनाया जाता है, जिसकी धूम पूरे क्षेत्र में देखने को मिलती है. पर्व के पहले दिन गढ़ पूजा पर चावल गुंडी के कई खंड का निर्माण कर पहला खंड

में एक अंडा रखा जाता है. गाय- बैलों को इकट्ठा कर छोड़ा जाता है, जो गाय या बैल अंडे को फोड़ता या सूंघता है उसकी भगवती के नाम पर पहली पूजा की जाती है तथा उन्हें भाग्यवान माना जाता है. मांदर की थाप पर नृत्य होता है.

इसी दिन से बैल और गायों के सींगों पर प्रतिदिन तेल लगाया जाता है. दूसरे दिन गोहाल पूजा पर मांझी थान में युवकों द्वारा लठ खेल का प्रदर्शन किया जाता है. रात्रि को गोहाल में पशुधन के नाम पर पूजा की जाती है. खाने-पीने के बाद फिर नृत्य गीत का दौर चलता है. तीसरे दिन खुंटैव पूजा पर प्रत्येक घर के द्वार पर बैलों को बांधकर पीठा पकवान का माला पहनाया जाता है और ढोल-ढाक बजाते हुए पीठा को छीनने का खेल होता है.

चौथे दिन जाली पूजा पर घर-घर में चंदा उठाकर प्रधान को दिया जाता है और सोहराय गीतों पर नृत्य करने की परंपरा है. पांचवें दिन हांकु काटकम मनाया जाता है. इस दिन आदिवासी लोग मछली ककड़ी पकड़ते हैं. छठे दिन आदिवासी झुंड में शिकार के लिए निकलते हैं. शिकार में प्राप्त खरगोश, तीतर आदि जंतुओं को मांझीथान में इकट्ठा कर घर-घर प्रसादी के रुप में बांटा जाता है. संक्रांति के दिन को बेझा तुय कहा जाता है. इस दिन गांव के बाहर नायकी अर्थात

पुजारी सहित अन्य लोग ऐराडम पेंड़ को गाड़कर तीर चलाते हैं. सोहराय में गीत नृत्य का अपना एक विशेष महत्व है.

पूरी दुनिया आज जहां पर्यावरण, पशु धन जैसे कई संकटों से जूझ रही है, उसका सिर्फ एक ही समाधान है, प्रकृति से जुड़ना. आप जब सोहराय में जाएंगे तो महसूस करेंगे कि सोहराय पर्व के आयोजन के माध्यम से हम पूरी दुनिया को यह संदेश दे सकते हैं कि अगर दुनिया को बचाना है तो इसी तरह प्रकृति से जुड़कर हमें त्योहार मनाने की आवश्यकता है. यह सिर्फ त्योहार ही नहीं जीवन का दर्शन भी है. इस संसार में सब को जीने और रहने का अधिकार है. सोहराय हमें बताता है कि केवल हमें ही जीने का नहीं, पेड़-पौधे और प्रकृति के साथ ही साथ पशु, जो हमारे जीवन का अभिन्न अंग है उन्हें भी जीने का अधिकार है. हम लोग सिर्फ मनुष्य के बारे में चिंता करते हैं, यह पर्व हमें 'जीव जीवश्य जीवनम' का संदेश देता है. जनजाति संस्कृति और चिंतन में पेड़-पौधे से लेकर जीवजंतु तक की चिंता समाहित है. दुनिया को बचाना है तो निश्चित तौर पर सभी को इस चिंतन को अपनाना होगा.

बसंत का पहला दिन है नवरोज

(ईरान की यादें)

शोभा भारद्वाज

पर्शियन संस्कृति में नव वर्ष (नवरोज) सोलर हिजरी कैलेंडर के अनुसार बहार (बसंत) का पहला दिन है. 21 मार्च को नवरोज ईरान, टर्की, सीरिया इराक एवं खुर्द समाज में धूम-धाम से मनाया जाता है, पर्व में होली का उल्लास, चैत्र मास के नवरात्रों, बैसाखी एवं ईस्टर का आभास नजर आता है. मुगलकालीन बादशाह अकबर के युग में पर्शियन नौरोज का जश्न दरबार में धूम-धाम से मनाया जाता था लेकिन बादशाह औरंगज़ेब की धर्मांधता ने हंसी-खुशी से मनाये जाने वाले उत्सव को बंद करा दिया.

ईरान के मूल बाशिंदे (पारसी समुदाय) के लोग अग्नि की पूजा करते थे. यहां तीन प्रकार की पवित्र अग्नि मानी जाती है. आज भी ईरान के 'यज्द' शहर में फायर टैम्पल है. पर्शिया में 16वीं शताब्दी में ईरान के शाह ने इस्लाम कबूल कर लिया, वहां के मूल बाशिंदों पर धर्म परिवर्तन का दबाब पड़ने लगा अत: ज्यादातर ने अपना वतन छोड़ कर भारत की शरण ली. वे सदा के लिए भारत में बस गये, दूध में पानी की तरह घुल मिल गये. पारसियों का नव वर्ष सोलर हिजरी कैलेंडर के अनुसार बहार (बसंत) का पहला दिन है.

नवरोज का इतिहास 3000 वर्ष पुराना है. ईरान के शाह राजसी वस्त्र धारण कर शाही सिंहासन पर गेहूं की मुट्ठी भर बालों को ले कर दरबार में बैठते थे. उन्हें सबसे पहला दरबारी स्वर्ण पात्र में मदिरा (सोमरस) देता था, फिर उपहार में सोने के सिक्के, एक सोने की अंगूठी, तलवार और धनुष पेश किया जाता था. पूरा दरबार ईश्वर की पूजा कर उसकी सत्ता का बखान करता था, बाद में शाह की प्रशंसा की जाती थी. यह शाही दर्शन का दिन था. नव वर्ष की खुशी में कैदियों को छोड़ दिया जाता था.

आज भी नवरोज परंपरागत रूप से ही मनाया जाता है. तैयारी कई

दिन पहले शुरू हो जाती है. पूरे घर को साफ कर सजाया जाता है. खुर्द समाज का नवरोज मनाने का ढंग कुछ अलग था, वह नोरोज से एक दिन पहले गोरूब (शाम) को अग्नि जलाते थे. उनके अनुसार एक दिन पहले आग जलाना अंधकार पर विजय पाना है. आग के चारों तरफ शानदार खुर्दी वस्त्र अर्थात महिलायें लम्बा अंगरखा और नीचे सलवार पहनती हैं, मर्द खुर्दी लिवास कमीज और ढीली सलवार कमर में पट्टा बांधते हैं, हाथों में रंग-बिरंगे रुमाल ले कर उन्हें लहरा-लहरा कर आग के चारों तरफ रक्स (डांस) करते थे. अब इस्लामी सरकार आने के बाद इस प्रथा पर बैन लग गया है. आग जलाना और रक्स करना धर्म के विरूद्ध माना जाता है फिर भी दूर किसी पहाड़ी पर नौरोज से पहले दिन आग जलती दिखायी देती थी वह आग पर से दूसरी तरफ कूद कर निकल जाते थे.

ईरान में हर प्रकार का मौसम है गर्मी भी है और बर्फ भी पड़ती है. बहार के मौसम में कहीं-कहीं फसल पक जाती है, वहां नई फसल की खुशी में और बर्फीले प्रदेश में बर्फ गिरने से पहले गोंदुम (गेहूं) बो दिया जाता है. बीज बर्फ के नीचे दबा रहता है लेकिन बहार आते ही उनमें अंकुर फूट जाते हैं. पूरी घाटियां फूलों से भर जाती हैं. जमीन पर मुख्यतया लाल फूल और उनके बीच में हर रंग के फूलों का गलीचा बिछ जाता है. ऐसा लगता था प्रकृति भी नये वर्ष का स्वागत कर रही है. पर्व सुबह शुरू हो जाता

है. मैंने दस नवरोज की शुभकामनाओं का आदान-प्रदान किया है. हर घर के मेहमान खाने के एक स्थान को विशेष रूप सजाया जाता है. नवरोज से दो हफ्ता पहले चीनी मिट्टी के खूबसूरत फूल पत्तियों से सजे कटोरे में गोंदुम (गेहूं) या जौ बोया जाता है. नवरोज के आते-आते हरी-हरी बालें उग आती हैं. घर के बीचों बीच रखी मेज पर खूबसूरत मेजपोश बिछता है उस पर अंकुरित कटोरे को रख दिया जाता है. यह कटोरा और उगी बालों को पौधों एवं वनस्पतियों का प्रतीक माना जाता है.

मेज पर सात वस्तुएं सजाई जाती हैं. फ्रेमदार शीशा (आकाश का प्रतीक), सीब यानी सेब (धरती का प्रतीक). हरे कांच के पात्र में मोमबत्तियां सजाई जाती हैं जिन्हें अग्नि का प्रतीक माना जाता है. पात्र में गुलाब जल भर कर रखा जाता है जो पानी का प्रतीक है. गोल्ड फिश को पतले कांच के जार में रखा जाता है जो पशु का प्रतीक है. खूबसूरती से अंडे पेंट कर उन पर चित्र बनाये जाते हैं, यह इंसानी जीवन एवं परिवार की वृद्धि की शुभकामना है. जीवन के पांच तत्व आकाश, अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी, सब को महत्व दिया जाता है.

पूरा परिवार मेज के चारों तरफ खड़ा होता है. पवित्र पुस्तक कुरान को सम्मान दे कर एक-दूसरे के सुखद जीवन की दुआ मांगते हुए नये वर्ष की शुभकामना करते हैं. घर के बुजुर्ग सब को उपहार देते हैं. आज भी वहां सोने के सिक्के भेंट किये जाते हैं. एक दूसरे को शीरीन, ईरानी मिठाई, खिलाते हैं. अब वहां पेस्ट्री का चलन है लेकिन वे अपनी प्राचीन परंपरा को भी नहीं भूले अत: सब्जे (अंकुरित गेहूं और जौ की हरीहरी कोमल बालों की मिठाई) जिसे 'वहां पुनर्जन्म का प्रतीक माना जाता है, बनाते हैं. इस्लाम में पुनर्जन्म की धारणा नहीं है परंतु परंपरा इसी प्रकार से चल रही है. गेहूं के मीठे दलिये को लेकर मान्यता है कि आपका और आपके परिवार का प्रभाव बढ़ेगा, सूखे मेवे माने जाते हैं कि प्रेम को बढ़ाते हैं. लहसुन को दवा का प्रतीक माना जाता है. सेब सुंदरता को बढ़ाएगा (ईरानी सुंदरता का जबाब नहीं है), जौ प्रेम को बढ़ाते हैं और सिरका आयु को बढ़ाने वाला माना जाता है. सभी वस्तुएं खूबसूरत कांच की तश्तरियों में सजा कर रखी जाती हैं.

त्यौहार में लोग एक-दूसरे के घर मुबारकबाद देने जाते हैं. घर आये मेहमानों का स्वागत सत्कार बड़े प्रेम से करते हैं. खुशी का माहौल होता है. लोग दूसरे शहरों में घूमने भी जाते हैं. धनवान लोग विदेश भ्रमण करने जाते हैं. दोपहर दो बजे ईरान टेलीविजन पर रंगारंग प्रोग्राम आते थे. मेरे बच्चे घड़ी में समय देखते रहते थे. जैसे ही एंकर आती वह कहती 'नौरोजे शुमा मुबारक' बच्चे भी दुगनी आवाज से चीखते नौरोजे शुमा मुबारक फिर वह कहती 'ईदे (फ़ारसी में इसका अर्थ खुशी है) शुमा मुबारक', बच्चे भी उसी लहजे में खानम जान मुबारक कहते. उनका यह मानना था जितनी खुशी से नया दिन मनाया जायेगा पूरा वर्ष उतना ही अच्छा गुजरेगा. पूरे तेरह दिन जश्न के दिन होते थे.

तेरहवां दिन सीसदा बदर कहलाता है, घर से बाहर गुजारने वाला दिन. कटोरे में बोई हुई खेती को वह प्रवाहित करने नदी पर जाते. नदी को रूद खाना कहते हैं. किनारे कालीन बिछा कर बैठ जाते. चाय के लिए अलादीन (मिट्टी के तेल से जलने वाला स्टोव) जलाते, उस पर चाय का पानी खौलता रहता, चाय हाजिर. बेहतरीन खाना घर से पका कर लाते, हरी सब्जी में पकी मछली, आब गोश्त (हरी सब्जी और सफेद चने ड़ाल कर पकाया गोश्त), ईरानी जाफरानी चावल लेकिन दलिया और अंकुरित बालों से बनी मिठाई जरूर बनती थी. सूखे फल, मेवे और बहुत सी वस्तुऐं खाने में सजाई जाती थीं. हर मेहमान को बिफ़रमा (खाने के लिए आपका स्वागत हैं) कह कर खाने का न्योता देते. हम भी बेहतरीन भारतीय खाना जिसमें खीर, गाजर का हलवा, अन्य पकवान बना कर ले जाते. हमारे घर के पास से रूद खाना बहता था उसके किनारे अपना सिफरा बिछा लेते बहुत से ईरानी जाने-अनजाने लोग हमारे साथ हमारा और अपना भोजन बांट कर खाते. हंसी-ख़ुशी से समय निकल जाता था. ■

सतुआन

ध्रुव नारायण गुप्त

बिहार, झारखंड और पूर्वी उत्तर प्रदेश में एक लोकपर्व होता है सतुआन. इसे लोग सतुआ संक्रांति या बिसुआ भी कहते हैं. बिहार के अंग क्षेत्र में यह पर्व 'टटका बासी' के नाम से जाना जाता है. कुछ लोग इस दिन के साथ पूजापाठ का कर्मकांड भी जोड़ देते हैं, लेकिन सतुआन वस्तुतः आम के पेड़ों पर लगे नए-नए फल और खेतों में चने एवं जौ की नई फसल के स्वागत का उत्सव है. इस दिन इन नई फसलों के लिए सूर्य का आभार प्रकट करने के बाद नवान्न के रूप में आम के नए-नए टिकोरों की चटनी के साथ नए चने और जौ का सत्तू खाया जाता है.

सत्तू भोजपुरिया लोगों का सर्वाधिक प्रिय भोजन है. इसे देशी फ़ास्ट फ़ूड भी कहते हैं. सत्तू चने का हो सकता है, जौ का हो सकता है, मकई का हो सकता है और इन सबके मिश्रण का भी. इसमें नमक मिलाकर, पानी में सानकर कभी भी, कहीं भी, कैसे भी खाया जा सकता है, लेकिन सत्तू खाने का असली मज़ा तब है जब उसके कुछ संगी-साथी भी साथ हों. भोजपुरी में कहावत है 'सतुआ के चार यार / चोखा, चटनी, प्याज, अचार.' एक और कहावत है 'आम के चटनी, प्याज, अचार / सतुआ खाईं पलथी मार' चटनी अगर मौसम के नए टिकोरे की हो तो सत्तू के स्वाद में चार चांद लग जाते हैं. ■

रक्कस बाबा

रजनी अरजरिया

हमारे जुझौती खंड में अनेक प्रकार के ग्राम देवी-देवताओं की पूजा होती है जैसे लाला हरदौल, कारस देव, गोंड बाबा, ठाकुर बाबा आदि. ऐसे ही एक लोक देवता रक्कस बाबा माने जाते हैं. यहां पर उनके प्रति अपार श्रद्धा और विश्वास देखा जाता है. रक्कस स्थानीय शब्दावली है रक्षक तत्सम है. यहां पर हर जाति के लोगों में रक्कस लगाने की परंपरा है.

जब लड़के की शादी होती है तो उसके पहले रक्कस बाबा की पूजा करने का विधान है. लड़के की शादी में सात रक्कस देने की प्रथा है. इसमें सात पूरी, उसके ऊपर हलवा या लप्सी, नारियल रखा जाता है. पंचोपचार से पूजा होती है और होम किया जाता है. रक्कस बाबा वंश बढ़ाने के देवता है. एक रक्कस का पूजन देखिए जो कि लड़की की शादी का है. महिलाएं झुंड में जाकर गांव के बाहर बने हुए रक्कस बाबा के चबूतरे पर रक्कस देने जाती हैं. ■

बुंदेलखंड का नौरता

वंदना अवस्थी दुबे

हमारा देश त्यौहारों का देश है. कुछ तो जगजाहिर त्यौहार हैं, कुछ ऐसे त्यौहार भी हैं जो अपने क्षेत्र विशेष के लिये तो बहुत महत्वपूर्ण हैं लेकिन उनकी राष्ट्रीय परिदृश्य पर कोई चर्चा नहीं होती. असल में इस तरह के त्यौहार, किसी न किसी बड़े त्यौहार का ही अहम हिस्सा होते हैं. जैसे ब्रज और राजस्थान में अन्नकूट, बुंदेलखंड में होली के कई दिन पहले से ग्वालटोला आल्हा गाने लगता है. ये भी एक उत्सव की तरह ही होता है, और बुंदेलखंड नौरता, जो कि नवरात्रि के साथ शुरु होता है.

नौरता, यानी नौ रातें. यानी नौ दिन तक चलने वाला उत्सव. जी हां, बुंदेलखंड का ये एक बेहद उल्लासपूर्ण लोकोत्सव है. एक ऐसा त्यौहार, जो केवल बेटियों के लिये निर्धारित है. जिसमें केवल बेटियां भाग लेती हैं. इस उत्सव में बेटों का कोई स्थान नहीं.

अश्विन शुक्ल प्रतिपदा से पूरे नौ दिन तक ब्रह्म मुहूर्त में सम्पन्न किया जाने वाला ये एक ऐसा उत्सव है, जिसमें बुंदेलखंड की हर बेटी भाग लेती है. इधर नवरात्रि का प्रारंभ हुआ, उधर उसी सुबह से नौरता का आगाज़ हो जाता है. इस उत्सव को मनाने के लिये कुंवारी लड़कियां दस दिन पहले से ही तैयारी शुरु कर देती हैं. अब तो रंगोली के रंग बाज़ार में बहुतायत से मिलने लगे हैं, वरना पहले लड़कियां सफ़ेद पत्थर इकट्ठे करती थीं फ़िर उनको कूटपीस के महीन पाउडर बनाती थीं. इस पाउडर के कई हिस्से कर उन्हें अलग अलग रंगों से रंग के रंगोली के रंग बनाये जाते थे. मोहल्ले का कोई एक ऐसा घर चुना जाता है जिसके बाहर काफ़ी जगह हो. इतनी जगह कि कम से कम पंद्रह लड़कियां एक साथ अपने-अपने खानों में रंगोली बना सकें.

सबसे पहले आपको इस उत्सव के बारे में बता दूं ये उत्सव मुख्य रूप से अविवाहित बेटियों का है. कहा जाता है कि 'सुअटा' नाम का एक राक्षस था, जो कुंआरी कन्याओं को, बेटियों को खा जाता था. इस राक्षस से बचने के लिये सभी बेटियों ने नवरात्रि में माता पार्वती की आराधना की और उन्होंने सभी बच्चियों को सुरक्षित कर लिया, और दैत्य को भस्म कर दिया. ऐसे राक्षसों के अंत और सुअटा के भस्म होने की खुशी में आज भी बुंदेलखंड की बेटियां नौरता का आयोजन करती हैं जो बेटियों द्वारा सृजित एक ऐसा रंग बिरंगा संसार है, जिसमें व्यवस्था है, संस्कार हैं और बुंदेली गरिमा है. इस त्यौहार के माध्यम से बेटियां गीतसंगीत, नृत्य, चित्रकला, मूर्तिकला और साफ़-सफ़ाई का अद्‌भुत समन्वय प्रस्तुत करती हैं. त्यौहार के एक दिन पहले जिस स्थान पर नौरता खेलना होता है, उस स्थान पर लड़कियों की संख्या के हिसाब से चौखाने बना लिये जाते हैं. ये कम से कम दो फ़ुट चौड़े और दो फ़ुट लंबे वर्ग होते हैं. इनके किनारे खड़िया मिट्टी से लकीरें खींच के विभाजित किया जाता है. हर लड़की अपना चौखाना गोबर से लीपती है. खेल के स्थान पर ही दीवार पर सूरज, चंदा और हिमांचल की तस्वीरें काली मिट्टी से बनाके चिपकाई जाती हैं.

तो ये सारी तैयारी उस घर की आंटी कर देती हैं, जिस घर के सामने नौरता खेला जाना है. पहले दिन सुबह लगभग तीन बजे लड़कियां उठ के नौरता वाले स्थान को एक बार फ़िर साफ़ करती हैं. एक

कलश तैयार किया जाता है. एक स्थायी थाली तैयार की जाती है, इसी थाली से रोज़ दीवार पर उकेरे गये सूरजचंदा की आरती होती है. थाली में सिंदूर, हल्दी, चावल, फ़ूल और दूब रखे होते हैं. आंटी एकदम विभोर हो के गाना शुरु करतीं-

‘नाय हिमांचल जू की कुंअर लड़ायतीं
नारे सुअटा गौरा देवी क्वॉरे में नेहा तोरा.
चंदामल के घुड़ला छूटे
सूरजमल के घुड़ला छूटे.’

इस गीत से ज़ाहिर होता है कि जब बेटियां पार्वती की शरण में गयीं, तब गौरा भी कुआंरी ही थीं.

गीत और आरती के खत्म होते ही लड़कियां अपने-अपने खानों में रंगोली बनातीं. एक से बढ कर एक रंगोलियां. रंगों का ऐसा अद्भुत संसार जो बस कल्पनाओं में होता है. लड़कियां रोज़ नयी रंगोली सीख के आतीं हैं और नई-नई आकृतियां उकेरती हैं साथ ही गीत गाती हैं-

‘तिल के फ़ूल,तिली के दाने,
चंदा ऊगे बड़े भिनसारे,
उगई न हो बारे चंदा,
हम घर होय लिपनापुतना
सात न होय, दे दे झरियां
ननद न होय चढै अटरियां.’

रंगोली बनाने का क्रम सुबह चार बजे शुरु हो जाता है और साढे पांच या छह बजे तक खत्म होता है. जब सबकी रंगोली बन जाती हैं, तब बचे हुए रंगों को लेकर लड़कियां सड़क पर बड़ी दूर तक जाती हैं और बीच सड़क पर उन्हीं बचे हुए रंगों से एक बेढब सा राक्षस बना के उसे पलट के देखे बिना भाग आती हैं. फ़िर सबकी अपनी-अपनी दिनचर्या शुरु. आठ दिन तक यही क्रम चलता है. आठवीं शाम को लड़कियां एक बहुत से छेद वाली मटकी में दिया जला के रखती हैं और उन सभी घरों में जाती हैं जहां की बेटियां नौरता में शामिल हैं. बहुत मधुर गीत-

‘पूछत-पूछत आये हैं,
नारे सुअटा कौन बड़े जी की पौर.’

गाते हुए हर दरवाज़े पर पहुंचती हैं. असल में ये चंदा एकत्र करने और न्यौता देने जैसा काम है. लोग जितना चाहते हैं उतनी राशि देते हैं. इस एकत्रित पैसे का इस्तेमाल आखिरी दिन होने वाली पूजा का इंतज़ाम और आने वालों को प्रसाद वितरण में किया जाता है. नौवीं रात को नौरता स्थल पर ही पूजन होता है.आने वालों को लड्डूओं का प्रसाद दिया जाता है. इसके बाद शुरु होता है नौरता खेलने

वाली बेटियों का आयोजन. चूंकि नौरता शहर के हर मोहल्ले में खेला जाता है तो सभी नौरता समूह अपनी गौर की तारीफ़ करते हुए दूसरी गौर का मज़ाक बनाते हैं. ये सब भी मनोरंजन का ही एक हिस्सा है. लड़कियां गाती हैं-

‘परायी गौर की आंय देखो झांय देखो,
का पैरें देखो,
नाक नकटी देखो,
आंख कानी देखो,
कान बूचौ देखौ
फ़टी चुनरिया देखो.’

इस गाने का कोई अंत नहीं होता क्योंकि अपने आप इसमें गौर के वर्णन जोड़े जाते हैं. अब बारी आती है अपनी गौर की-

‘हमायी गौर की आंय देखौ झांय देखौ
का पैरें देखो
नाक नथनी देखो
हाथ कंगन देखो
पैरौं पायल देखो.’

इस जवाबी कार्रवाई के बाद दावत शुरु होती है. दावत के लिये सभी लड़कियां अपनेअपने घरों से पकवान लाती हैं और हर कौर पर ‘हप्पू’ बोल के खाती जाती हैं. अंत में सूरज, चंदा और हिमांचल का जल में विसर्जन कर इस बेहद रंगीन, गरिमामयी त्यौहार का समापन होता है और लड़कियां फ़िर इंतज़ार करने लगती हैं अगली नवरात्रि का. इस त्यौहार में आप बुंदेलखंड के किसी भी हिस्से में चले जायें, रंगोली से घर की दहलीज रंगीन मिलेगी. उत्सव के रंग आपका स्वागत करते मिलेंगे. तो कुछ दिन तो गुज़ारिये बुंदेलखंड में. ■

पुतरी पूजन

प्रवीणा त्रिपाठी

'पुतरी पूजन कैसें जाऊं री,
बरा तरें आ गए लेवऊआ.
पहले लेवऊआ ससुर जी आये,
ससुरा के संग नही जाऊं री,
बरा तरें आ गए लेवऊआ.
दूजे लेवऊआ जेठ जी आये,
जेठा के संग नहीं जाऊं री,
बरा तरें आ गए लेवऊआ.
तीजे लेवऊआ देवर जी आये,
देवरा के संग नही जाऊं री,
बरा तरें आ गए लेवऊआ.
चौथे लेवऊआ ननदोई जी आये
ननदोई के संग नही जाऊं री,
बरा तरें आ गए लेवऊआ.
पांचेये लेवऊआ साजन जी आये,
सजना के संग चली जाऊंगी
बरा तरें आ गए लेवऊआ.'

अक्ती, आखा तीज या अक्षय तृतीया, बुंदेलखंड और बघेलखंड की बेटियों का खास त्यौहार है. भगवान परशुराम के अवतरण दिवस अक्षय तृतीया के दिन पुतरी-पुतरा पूजन और उनका ब्याह बरगद के पेड़ के नीचे संपन्न कराना, गठजोड़ में चावल, हल्दी और रुपया-पैसा बांधना, और यही गीत गाते हुए मिठाई बांटना इस आयोजन का हिस्सा होता है. अब ये गठजोड़ बराबर्साइत (वटसावित्री अमावस्या) के दिन ही खुलेगा.

दरअसल ऐसी मान्यता है कि अगर कुंवारी बेटियां इस तरह अक्षय तृतीया (अक्ती) के दिन गुड्डे-गुड़िया की शादी करती हैं तो भविष्य में उन्हें अच्छा वर मिलता है और संपन्न घर में उनकी शादी होती है, हालांकि आज से कुछेक सालों पहले तक अक्षय तृतीया के दिन लोग अपने नाबालिग बच्चों की शादियां भी कराते रहे इस तर्क के साथ कि इस दिन चूंकि भगवान विष्णु के

अवतार भगवान परशुराम का जन्म हुआ था सो ये अभिजीत शुभ मुहूर्त है जिसके लिए किसी की पुष्टि की आवश्यकता नहीं और ये भी कि भगवान परशुराम चूंकि चिरंजीवी हैं तो बच्चों का वैवाहिक जीवन भी सफल और अनंतकाल तक अक्षुण्य रहेगा.

समय बदला, शिक्षा का प्रसार हुआ और मान्यताएं भी बदलीं, क़ायदे-क़ानून भी और लोगों की सोच भी और बालविवाह पर रोक भी लग गयी, लेकिन परंपराएं वही हैं और रहनी भी चाहिए. अक्षय तृतीया को गुड्डे-गुड़ियों का विवाह कराना हमारी संस्कृति है और परंपरा भी. ये प्रतीक है हमारे संस्कारों का, बेटियों के कोमल मन पर परंपराओं के बीज बोने का, ये कोई बोझ नहीं, एक स्वस्थ परंपरा है, अपनी संस्कृति अपने संस्कारों को संजोए रखने का प्रयास है. हम कितने ही आधुनिक क्यों न हो जाएं, अपने संस्कारों को बचा कर रखें, तभी भारतीयता बची रहेगी.

मैं जब तक नानी के साथ रही तब तक उत्साह के साथ गुड्डे-गुड़िया को तैयार करती. लाल कपड़े का लहंगा बनाती गुड़िया को और ओढ़ाती हरी चुनरिया, गुड्डे को पीले रंग का कुर्ता, लाल साफा और फिर भरी दोपहर 12 बजे नानी के साथ ही पूजा करने जाती अक्ती की. अब उनके जाने के बाद हर बरस जब ये पूजा करती हूं ऐसा लगने लगता है कि वो साथ हैं, गा रही हैं मेरे साथ, बड़े बरगद के पेड़ के नीचे, चने की भीगी दाल और गुड़ के साथ गुड्डे-गुड़िया को हाथों में लेकर बरगद के पेड़ के सात चक्कर लगाते हुए 'पुतरी पूजन कैसे जाऊं री'. ■

हरछठ

शरद कोकास

हमारे आस-पास लोक की अनेक कथाएं बिखरी हुई हैं. कुछ कथाओं को धार्मिक ग्रंथों ने सहेज लिया है, कुछ में मिथक शामिल हो गए हैं. ऐसी ही एक कथा है 'हरछठ' या 'हलषष्ठी' की. प्राचीन पितृसत्तात्मक समाज में पुत्र का महत्व इस तरह स्थापित किया गया कि बिना पुत्र के उद्धार नहीं है. स्त्री से कहा गया कि वह सिर्फ पुत्र को जन्म दे इसलिए पुत्र की कामना करने वाली स्त्रियां इस दिन यह व्रत रखने लगीं. मैं आपको संक्षेप में इस व्रत की कथा बताता हूं. हरछठ का यह दिन मेरी मां की स्मृतियों से जुड़ा है. यह कथा उन्होंने ही सुनाई थी.

प्राचीन काल में किसी गांव में एक ग्वालन रहती थी जो प्रतिदिन पास के गांव में दूध बेचने जाती थी. एक बार वह प्रसव पीड़ा से व्याकुल हो जाती है और गांव से बाहर एक खेत की मेड़ पर महुए के पेड़ के नीचे एक बच्चे को जन्म देती है. अब दूध तो बेचना ही था सो बच्चे को जन्म देकर वह उसे पेड़ के नीचे लिटा देती है और गांव में दूध बेचने चली जाती है.

उस दिन संयोग से हलषष्ठी होती है और बलराम यानि हलधर की पूजा की वजह से हल, बैल, गाय से जुड़ा हर काम वर्जित होता है. दूध भी केवल भैंस का ही उपयोग में लाया जा सकता है लेकिन वह ग्वालन गाय और भैंस का दूध मिला कर बेच देती है.

इधर खेत में हल चलाते हुए किसान के बैल अचानक भड़क जाते हैं और हल समेत वे बच्चे की दिशा में दौड़ जाते हैं. वह हल बच्चे के पेट में घुस जाता है और बच्चा मर जाता है. किसान से यह करुण दृश्य देखा नहीं जाता और वह किसी झाड़ी के कांटे से उस बच्चे का पेट सी देता है.

जब वह ग्वालन लौट कर आती है और अपने बच्चे की यह दशा देखती है तो उसे दु:ख के साथ बहुत पश्चाताप भी होता है. वह गांव में जाकर बताती है कि उससे गलती हो गई और उसने हरछठ के दिन भैंस के दूध में बचा हुआ गाय का दूध मिला कर बेच दिया. गांव के लोग उसे क्षमा कर देते हैं. वह जब दोबारा लौट कर आती है तो देखती है कि उसका बच्चा जीवित है.

अब आपको मैं अपने बचपन में ले चलता हूं जहां मेरी मां

हरछठ का व्रत करती थी. मिट्टी का घर था. दीवार पर वह भैंस के गोबर से लीपकर चूने, गेरू खड़िया और चावल के आटे से हरछठ माता की तस्वीर बनाती. बाबूजी भी उसमें हरछठ की कथा से जुड़े चित्र बनाते. जैसे इस कहानी से संबंधित चित्र भी जिसमें गर्भवती ग्वालन होती थी जो सिर पर दूध का मटका लिए होती थी, एक बच्चा होता था, बैल, हल, महुआ का पेड़ गांव वाले, भैंसों का झुंड और भी ऐसी बहुत सारी चीजें.

मुझे बचपन से सवाल करने में बहुत मज़ा आता था मैं मां से पूछता, 'मां अगर उस ग्वालन को बच्चा होने वाला था फिर वह दूध बेचने क्यों गई?'

मां कहती, 'बेटा वह बहुत गरीब थी, ग़रीब स्त्री प्रसव का अवकाश कैसे ले सकती है? गरीब अगर घर बैठेंगे तो क्या कमाएंगे और क्या खायेंगे?'

मैं फिर पूछता, 'लेकिन उसने भैंस के साथ गाय का दूध मिलाया तो उससे पाप कैसे हुआ? वो तो अपना दूधवाला भी मिलाता है, बल्कि वो तो पानी भी मिलाता है?'

मां कहती, 'दरअसल हलषष्ठी या हरछठ कृष्ण के भाई बलराम का जन्मदिन है और बलराम का अस्त्र हल है सो इस दिन हल नहीं चलाया जाता और न बैलों का उपयोग किया जाता है गाय का दूध भी इसीलिए वर्जित है क्योंकि बैल गोवंश से हैं.'

अब उस किसान ने वर्जनाएं तोड़कर इस दिन भी हल चलाया और ग्वालन ने भी मिला हुआ दूध बेचा सो उसकी सजा उसे मिली.

मैं मां से बहस करता, 'लेकिन मां सजा तो ग्वालन और उसके बेटे को मिली? और किसान को तो मिली ही नहीं?'

मां कहती, 'लेकिन फिर प्रायश्चित के बाद बेटा जीवित भी तो हो गया ना. इसलिए मां यह व्रत अपने बेटों के लिए करती है कि उसके बेटे खूब जियें. कथा प्रसंगों के अनुसार वह महुए के पत्ते पर भैंस के दूध से बना दही और पसई के चावल यानी बिना जोती जगह जैसे खेत की मेड पर उगे चावल खाती है. समझे?'

मैं फिर कहता, 'लेकिन मां, प्रायश्चित स्त्री को ही क्यों करना पड़ता है? उस किसान को क्यों नही करना पड़ा? पाप तो उसने भी किया था.' मां मुस्कुराती और फिर मेरी बकबक बंद करने के लिए मुझे एक दोना भरकर लाई, गुड़, महुए का प्रसाद दे देती.

हर साल चलने वाली मेरी यह बहस तब तक चलती रही जब तक मेरी छोटी बहन सीमा कुछ समझदार नहीं हो गई. एक साल आखिर हरछठ पर उसने विद्रोह कर ही दिया, 'मां, तुम पूजा में सिर्फ शरद भैया और बबलू के नाम के लाई के दोने क्यों भरती हो? बेटे हैं इसलिए? कोई नहीं. मैं बेटी हूं तो क्या हुआ, बेटे से कम हूं क्या? अब से मेरे नाम के भी दोने भरे जायेंगे. इस तरह उस साल से मां ने सीमा के नाम के भी छह प्रसाद के दोने भरने शुरू किये.

आज मां नहीं है, उनके साथ ही यह पर्व मनाने का सिलसिला भी समाप्त हो गया. बचपन के वे छोटे-छोटे सुख, हंसी-मज़ाक, पर्व का उल्लास भी समाप्त हो गया. सन 2001 में 8 अगस्त को हरछठ से ठीक दो दिन पहले मां यह दुनिया छोड़कर चली गई. उसने अस्पताल में अपनी उसी बेटी की बांहों में अंतिम सांस ली जिसके नाम के दोने वह नहीं भरती थी. दोनों बेटे उसके अंतिम समय उससे बहुत दूर थे. ■

छठ

ओम राजपूत

छठ
वो पर्व है
जिसमें धमनियों का सारा रक्त
एकबार के लिए
हृदय की ओर मुड़ जाता है.
रिश्ते जिंदा हो जाते हैं.
इससे
गिरमिटिया को
देस लौटने का
अवसर मिल जाता है.
रिश्तों पर जमी धूल झड़ जाती है.
आस्था का अभिकेंद्र
अपना गांव अपना देस हो जाता है.
हम खिंचे चले आते हैं.
इस पर कि हम
भले
बहुत ही पढ़ लिए हों
और हो गए हो
नास्तिक
विद्वान
कोई सीईओ
प्रोफेसर
आईआईटीयन
आईएएस
पत्रकार
रहने लगे हों
किसी सिलिकॉन वैली में
अथवा
किसी साउथ ब्लॉक में
जेएनयू या कि प्राइम टाइम में
हम
अपनी तार्किकता/बौद्धिकता का आडंबर
त्याग कर
अपनी मां, भाभी, बहन, पत्नी के
आग्रह, अनुराग और आस्था के
अनुयायी हो जाते हैं.
काहे से कि
केवल पर्व नहीं है
और न ही
धार्मिक अनुष्ठान मात्र
यह जीवन का सम्पूर्ण उत्सव है.
यह सदियों से हमारे होने का प्रमाण है.
सदियों की गवाही है.
मुकम्मल तौर पर
छठ
हमारे गांवों का, गलियों का
पेड़ों का, पौधों का, फलों का, अनाजों का,
नदियों-तालाबों का,
सामूहिक नृत्य है, सामूहिक गान है.
सामूहिक प्रार्थना है, सामूहिक उपासना है. ■

सावन के मायने

सुनील श्रीवास्तव

चौखट पर खड़ी औरत
बाट जोहती है
कभी पिता की
कभी पति की
कभी पुत्र की
सबसे पुराना रिश्ता है
पिता से
फिर पति से
पिता ने विदा किया
सौगंध खिला कर
चुटकी भर सिंदूर की
मां ने दिलाई याद
संस्कारों की
आशीष दिया
दूधो नहाने और
पूतों फलने की
सब कुछ आंचल में रख
सदियों से वह आ रही है
सजते-संवरते
वही चिटुकी भर सिंदूर
सिंधोरा से
मांग में भरते
कहां हैं झूले,मेहंदी
सखियों की ठिठोली
भाभी की चिकोटी
बारिश की बूंदें
लहराती फसलें
पति परमेश्वर है
आयेंगे
गिरते- पड़ते - लड़खड़ाते
रात के अंधेरे में
मूसलधार बारिश में
खायेगा सौगंध बार-बार
छोड़ दूंगा शराब और जुआ
लड़खड़ाती जबान से
तारीफ करेगा
देह की, सूरत की, बालों की
वह देखती-सुनती है
हर दिन-रात
सौगंध का खाना और टूटना
महसूस करती है
देहगंध
दिन- प्रति- दिन
चमकती आकाश से निकली
रोशनी में
आंखें नम हैं
बरकरार है देह की टूटन
फिर भी खड़ी है
घर की दहलीज पर
प्रतीक्षा- प्रतीक्षा- प्रतीक्षा
ढूंढती है अर्थ
पिता की सौगंध का
मां के संस्कारों का
पति की देहगंध का,
तलाशती है वह
सदियों से
बंद-खुली आंखों से
सावन के मायने.

देव उठ गए

मधु सक्सेना

उठ गए तुम देव?

इंतज़ार था.

उठो तो शुरू हो

जगत कल्याण का काम.

करो विवाह, तारो वृंदा को

विवाह का मतलब ही

तारने से है.

विवाह हो जाना याने

लड़की का तर जाना,

उसके माता- पिता का तर जाना,

तभी तो पूज दिए वर के पैर

दान कर दी कन्या

कन्यादान का पुण्य ले लिया.

इस बार उठे हो तो

कुछ तो नया करो

सहमति ले लो एक बार वृंदा से

पूछ लो एक बार लक्ष्मी से

फिर करना विवाह.

और कितनी वृंदायें मात्र पौधा बन कर

रह जायेंगीं

पेड़ बनने का सपना लिए.

पुजेंगीं पर बार-बार सूखेंगी.

हद बना दी

भले ही रंग-बिरंगी है

पर बंधी तो है ना

आस्था के बंधन में?

पुजेगी पर घर में नहीं आएगी

जड़ होकर ही पूजे जाते है हमारे यहां.

अब इस बार जो उठे हो देव

तो कुछ और भी करो.

लक्ष्मी को बता दो समान वितरण के नियम

वृंदा को जड़ मत होने दो.

जाग गए हो तो

आंखें भी खोल लो देव.

ईशरा! अंदर आओ

सुभाष तराण

आपको एक बहुत भोली कविता से परिचित करवाते हैं. इस कविता की ये पंक्तियां मेरी पिछली पीढियों द्वारा विकसित की गयी लुप्त होती स्थानीय भाषा में उस आश्वासन से संवाद की कोशिश है, जिसे हमआप शिव कहते हैं. दुनिया के लिए यह मंदिरों में रहता होगा लेकिन मेरे लोग तो वक्त की किसी बेनाम तारीख से शिवरात्रि की रात उसका आवाज देकर आह्वान करते हैं और उसके साथ उपरोक्त संवाद के माध्यम से सब कुछ बेहतर होने की कामना करने के बाद पारंपरिक पकवानों तथा प्रतीकात्मक पत्तों का भोग लगा उसे अपने घर में मेहमान की तरह बरतते हैं.

एक समय में महासू क्षेत्र के लगभग हर घर में शिवरात्रि की शाम दरवाजे के बाहर एक छोटे बच्चे को खडा कर मेहमान स्वरूप आराध्य शिव, जिसे हमारे लोग 'ईशर' कह कर संबोधित करते थे, से संवाद करते है.

	हिंदी रुपांतरण :
ईशरा!	ईशरा!
ओ	ओ
उंडा आव.	अंदर आओ.
आई लागा.	आ रहा हूं.
भाईंडे भीतर	घर-बाहर
राजी खुशी.	राजी-खुशी रहेगी.
बाड़ बोईची	खेत और पालतू पशु
फोबदी ए.	बढ़ते रहेंगे.
शाख फसल	खेतों में फसल
राजियो की.	भरपूर होगी.
सुख-समा	सुख संपति
आपड़े घरे.	अपने घर.
झेड़ो-झमाड़	आपदाएं-विपदाएं
बोईरी के घरे.	बैरी के घर.
मुशा, कुशा	चूहे, घास-कुशा
नदी पार.	नदी पार.
बादू-बोईरी	बीमारी और बैरी
खबरदार.	खबरदार. ■

बुंदेली के महाकवि ईसुरी को कैसे पढ़ें ?

डॉ. के. बी. एल. पाण्डेय

बुंदेली के महाकवि ईसुरी को किस तरह पढ़ा जाए? उन्हें ही क्यों, उस समय के विभिन्न अंचलों के अपनी भाषा में लिखने वाले अनेक विशिष्ट कवियों के प्रति भी यह प्रश्न किया जा सकता है. उन्हें अपनी भाषा या बोली में अपने परिवेश की जीवनानुभूतियों को लोक कविता कहकर सीमित कर दिया जाए या जीवन के एक बड़े भूखंड के स्पंदनों, संवेदनों और अनुभवों के संप्रेषण की व्यापक कविता का कवि कहा जाए?

हम प्राय: ईसुरी को लोक कवि की दृष्टि से देख कर उनके प्रति अन्याय ही करते हैं. हम प्राय: 'ईसुरी की फागें' कहकर उनकी रचनाएं एक लोक विधा तक सीमित कर देते हैं, भले ही उनकी उत्कृष्ट रचनाशीलता की प्रशंसा करते हैं. फागें तो वे हैं ही और उन्हें फागें कहना गलत नहीं है परंतु जब हम उनका विमर्श साहित्यालोचन के मानकों पर करते हैं तो उन्हें कविता कहना अधिक प्रासंगिक हो सकता है. हम 'ईसुरी का काव्य' कहकर जब उनका समालोचन करें तो हम उन्हें व्यापकता से जोड़ने के विचार से प्रेरित होंगे. क्या फागें कविता नहीं होतीं और क्या फागों को सीमित उपलक्ष्य और सीमित समाज के स्तर से उठाकर उन्हें श्रेष्ठ काव्य के रूप में विवेचित नहीं किया जा सकता? ईसुरी तो इसके अनन्य उदाहरण हैं.

बुंदेली के महाकवि ईसुरी अपनी अनुभूति और भाषिक सर्जना में कितने मौलिक और विशद हैं कि भाषा की क्षेत्रीयता के बावजूद उनकी कविता के आस्वाद का धरातल व्यापक है. उपलक्ष्यपरकता और परिवेश की घटनाओं का वर्णन ईसुरी में भी है पर उनकी अधिकतर रचना व्यापकता का प्रभाव रचती स्वतंत्र कविता है. ईसुरी सहज अनुभूति और अकृत्रिम अभिव्यक्ति के कवि हैं. उनमें शास्त्र के नाम पर रूढ़ होती सभ्यता की दिखावट और बनावट नहीं है. उनके राग, विराग में औपचारिकता, गोपन या दमन नहीं है, उनमें कोई ग्रंथि नहीं है.

इसे समझने के लिए हमें उस समाज की मानसिकता को देखना होगा ईसुरी जिसके नागरिक हैं. श्रृंगार या काम के संदर्भ में वहां नैतिक सामाजिक वर्जनाए हैं पर उनमें दुहरापन नहीं है. वहां अगर भाभी से देवर का मजाक का रिश्ता है तो उसे सामाजिक मान्यता प्राप्त है. विवाह में समूह के रूप में अगर स्त्रियां यौनांगों का नाम लेती हुई वर पक्ष

से परिहास करती हैं तो वह उनका सामूहिक उल्लास है. वहां कपड़े उतार कर नग्नता को बुरा कहने का व्यावसायिक रिवाज नहीं है. ईसुरी की अकृत्रिमता के संबंध में रामविलास शर्मा ने लिखा है 'वास्तव में ईसुरी की रचनाएं इस दोहरी नैतिकता के प्रति एक विद्रोह हैं. उन्हें जीवन से, जीवन के आनंद से, यौवन, उल्लास, इंद्रिय बोध के संसार से इतना प्रेम है कि वे बारबार सामाजिक निषेध की दीवार से टकराते हैं.'

हम ईसुरी को अपने समय के प्रतिनिधि काव्य में घटित होने के आलोक में देखें. उस समय की प्रतिनिधि कविता का स्वभाव कैसा है? उस संवेदना से ईसुरी की कविता का कहीं कोई जुड़ाव हो रहा है या नहीं? अगर नहीं हो रहा है तो उसका कारण क्या है? यदि हम प्रतिनिधि कविता के साथ इस तरह के क्षेत्रों में लिखी जाती कविता को भी नहीं देखेंगे तो हम कविता या साहित्य को दो स्तरों पर पढ़ते रहेंगे. प्रतिनिधि या परिनिष्ठित काव्य और लोक काव्य साहित्य जैसा कि आजकल हो रहा है. यह भी तो देखा जाना चाहिए कि अगर अभिव्यक्ति की भाषा से परे उसके कथ्य पर ध्यान दें तो वह कहां तक अपने समय से जुड़ा है भले ही वह कुछ पीछे है,उसमें किसी भी रूप में कोई बदलाव है.

ईसुरी का समय सन् 1841 से 1909 तक है. हिंदी साहित्य की दृष्टि से यह संक्रमण काल है. आचार्य शुक्ल ने रीतिकाल का अंत 1850 ईसवी में माना है. इस समय तक रीति काल का उत्तरार्ध ही नहीं अंत चल रहा था. कुछ कवि रीति परंपरा में अभी भी लिख रहे थे पर प्रमुख रीति कवियों के लेखन की लगभग इति हो गई थी. पर एक विचित्र स्थिति देखी जा रही थी कि एक ओर कविता का नया स्वरूप उभर रहा था, दूसरी तरफ उसी समय सैकड़ों कवि परंपरा से जुड़े थे. वह रीतिकाल को विषय के आधार पर ही नहीं छंद और भाषा के आधार पर भी जीवित रखे थे. यह प्रवृत्ति चौथे-पांचवें दशक तक भी मिलती है. यह विचित्र बात है कि नयी प्रवृत्ति और भाषा की दृष्टि से भारतेंदु और महावीर प्रसाद द्विवेदी का समय उल्लेखनीय है पर भारतेंदु ने भी कवित्त लिखे हैं. भाषा में भी नएपन की सत्ता उभर रही है पर ब्रज का चलन अब भी मिलता है.

भारतेंदु युग के पहले ही सामाजिक बदलाव की भूमिका लिखी जाने लगी थी, जिसे पुनर्जागरण प्रबोधन या नवजागरण का समय कहा गया. तर्क और मानवता के इस समय में सामाजिक कुरीतियों और रूढ़ियों का प्रतिरोध विभिन्न आंदोलनों के द्वारा होने लगा था. बाल विवाह, सती प्रथा, विधवा, बेमेल विवाह के विरोध में प्रबोधन या नवजागरण चल रहा था. शिक्षा, अस्पर्श्यता, जातिवाद, स्त्री शिक्षा और स्त्री जागरण के पक्ष में नया सोच का क्षेत्र गढ़ा जा रहा था. यही परिवर्तन कामी सोच 'भारत दुर्दशा' और 'अंधेर नगरी' लिखने का साहस जगा रहा था. एक लंबी सुप्तावस्था के बाद जागकर चीजों को पहचानने में समय लगता है. साहित्य में भी यह प्रभाव धीरे-धीरे आ रहा था. ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रति भी विरोध की सांसें निकलने लगी थी लेकिन फिर वही बात कि अभी संक्रमण प्रारंभ ही हुआ था. परिनिष्ठित साहित्य के अलावा आंचलिक लेखन की खोज और उसका संकलन चलने लगा था. इससे बोलियों के आंचलिक साहित्य का विपुल भंडार साहित्य के रूप में पढ़े जाने का विषय बनने लगा,

हालांकि अंग्रेजी के **FOLK** फोक के अनुवाद के रूप में इसे ग्रामीण चेतना के साहित्य के रूप में देखा गया.

साहित्य दो स्तरों पर पढ़ा जाने लगा परिनिष्ठित और लोक. कभी-कभी लोक की शैली और विधा को परिनिष्ठित साहित्य अपनी रुचि परिवर्तन के लिए प्रयुक्त कर लेता था पर इससे एक बड़ा संवाद होने से रह गया. दोनों स्तरों के साहित्यकार अपनी तरह रचना कर रहे थे. अगर यह कहा जाए कि स्थानगत परिवेश अपने सभी रचनाकारों को समान रूप से प्रभावित करता है तो यह आश्चर्य की बात होगी कि जब एक ही परिसर में बैठे मैथिलीशरण गुप्त हरिगीतिका छंद में भारतभारती लिख रहे थे और 'रंग में भंग' की रचना कर रहे थे तब झांसी में नाथूराम माहौर और जिले के अन्य भागों के बुंदेलखंड के मऊरानीपुर, छतरपुर आदि के प्रतिभाशाली कवि फाग, ख्याल,सैर और पारंपरिक विषयों पर कवित्त शैली में लगे थे. हालांकि रीतिकाल का प्रभाव ऐसा था कि स्वयं गुप्तजी ने भी शुरू में रसिकेश नाम से कविता शैली में कविता लिखी है. साकेत और यशोधरा में कुछ कवित्त हैं भी.

मेरा मंतव्य यह नहीं है कि बोलियों में और अधिकतर पारंपरिक काव्य विषयों पर लिखने वाले कवियों को प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी, अज्ञेय आदि के साथ रखकर पढ़ा जाए क्योंकि उनकी काव्य चेतना वह नहीं है लेकिन उन्हें अपनी रचनाधर्मिता की गुणवत्ता के आधार पर आलोचना के व्यापक मानकों पर परखा जाए. उन्हें केवल गांव का कवि न समझा जाए. यदि बात वैचारिकता की है तो उसमें भी भक्ति, नीति, जीवन को संचालित करने वाली प्रेरणाओं का वर्णन है. उनके भी अपने जीवन निष्कर्ष हैं. ईसुरी के लिखे को भी कविता कहिए, केवल फागें नहीं.

मेरा आशय यह नहीं है कि बोलियों में बिना किसी सार्थकता के केवल पुराने विषयों पर तुकें जोड़ने वाले लोगों को भी कवि या लोक कवि का दर्जा दिया जाये. आजकल हो यही रहा है. लोक संस्कृति, लोक साहित्य के नाम पर वैसे ही लिखा जा रहा है जैसे किसी संग्रहालय में रखी वस्तुओं को जो भी देखने आता है वह अपनी तरह एक सा वर्णन करता रहता है. क्या प्रेमचंद के हल्कू, घीसा, माधव, अलगू चौधरी, जुम्मन शेख, होरी, धनिया आदि पात्र इसी लोक के हैं. जीवन के संघर्ष, अभाव उनमें भी हैं, फसलों के नष्ट हो जाने के कारण जीवन गुजारना कठिन ईसुरी में भी है और वह केवल तटस्थ कविता वर्णन नहीं है. उस में दर्द है, मजबूरी है. यह उनकी दृष्टि का विस्तार है. नीति भारतीय समाज का एक नियामक तत्व रहा है. आध्यात्मिकता और आस्तिकता तो आंतरिक रूप से समाविष्ट है ही.

अपने समाज का परिचय देती हुई धारणाओं का वर्णन ईसुरी की कविता करती है. कोर्ट कचहरी, अहलकार, रेलगाड़ी, पिस्तौल, महुआ जैसा पेट भरने वाला वृक्ष, सामाजिक आर्थिक व्यवस्था के संकेत, ये सब भी ईसुरी की कविता में आ रहे हैं तो यह तो प्रमाणित है कि ईसुरी की कविता का लोक भी परिवर्तनों को पहचान रहा था. अत: ईसुरी के काव्य को एक ओर हम लोकरंजन की दृष्टि से पढ़ें तो दूसरी ओर कविता की आलोचना अर्थात उसमें रचनाशीलता की विलक्षणता भी देखें और उन्हें कविता समय से जोड़ें. ■

पहेलियां

डॉ. कमलेन्द्र कुमार

1. लोहे का मैं पात्र निराला, मुझ पर रख लो रोटी गोल.
रंग मेरा है काला-काला, बूझो राधा, रवि, काजोल.

2. तीन अक्षर मेरे नाम में आते रामू भैया,
मध्य हटे तो 'चिटा' बनूं मैं, रखे हाथ में मैया.

3. गोल-गोल सी रोटी को मैं, मन से खूब नचाता,
मम्मी, चाची, दादी को मैं, सदा बहुत ही भाता.

4. कभी इधर से कभी उधर से, मम्मी घूंसा मारे.
दो अक्षर का नाम हमारा, बोलो मोहन प्यारे?

5. प्रथम हटे तो 'करी' बनूं मैं, मध्य हटे तो 'टोरी',
ध्यान लगाकर बूझो प्यारे, चंदन, राज, किशोरी.

6. मध्य हटे तो 'करी' बनूं मैं, प्रथम हटे तो 'टोरी',
दही साग मुझमें रख खाओ, बोलो राज, चकोरी

7. तीन अक्षर का नाम हमारा, सुन लो रानी, सुन लो भैया,
प्रथम हटे तो 'लास' बनूं मैं, बूझो रानी किशन कन्हैया.

8. पुआ बाजरे मीठे-मीठे, रख मुझमें रोज बनाओ,
गर्म पकौड़े, गर्म मंगौड़े, तुम ले चटखारे खाओ.

9. रोज पकाता, रोज खिलाता, चावल, सब्जी, दाल,
सीटी बजा-बजा कर बच्चो, करता खूब धमाल.

10. खीर कचौड़ी, पूड़ी सब्जी, रख लो रोली लाली,
दो अक्षर का नाम हमारा, कहते मुझको.....

11. छन्न-छन्न कर खूब नचाती, पूड़ी-पुआ-पकौड़ी,
और नचाती दही बड़े को, नाचे खूब कचौड़ी.

12 .अगर हटा दो पहला अक्षर, 'तीली' मैं बन जाऊं.
तीन अक्षर का नाम हमारा, बोलो क्या कहलाऊं?

(उत्तर 1 : तवा, 2 : चिमटा, 3 : बेलन, 4 : आटा, 5 : टोकरी, 6 : कटोरी, 7 : गिलास, 8 : कड़ाही 9 : कुकर, 10 : थाली, 11 : करछुल, 12 : पतीली)

प्रेम में होना

भारती पाठक

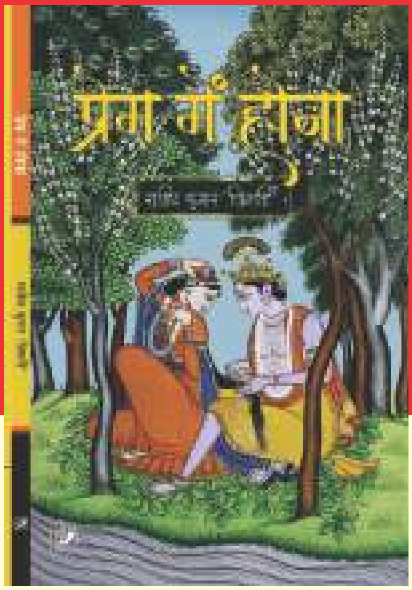

ये कहना अतिशयोक्ति न होगी कि प्रेम ही है जिसने संपूर्ण प्राणी जगत को भावनाओं के सूत्र में पिरोकर दुनिया को रहने लायक बना रखा है. देश, काल, समाज, समय और उम्र से परे प्रेम के अनगिनत रूपों में से एक, प्रेमी प्रेमिका के रूप में अपने प्रिय को साकार देखना या उसकी उपस्थिति और अपने प्रति प्रेम को अनुभूत करना नि:संदेह अद्भुत होता है. प्रेम करना और प्रेम का पात्र होना दोनों ही स्थितियों में प्रेम कविताएं या प्रेम गीत प्रेमी हृदयों के संबल होते हैं जिनमें डूबा उनका मन सृष्टि में उपस्थित कण-कण में अपने प्रेम को प्रतिबिंबित करता बड़े से बड़े संताप भी हंसकर सह लेता है. प्रेम की सहज उष्णता से भरी ऐसी ही कविताओं का संग्रह है 'प्रेम में होना' जो हिमाचल के लोकप्रिय कवि राजीव कुमार 'त्रिगर्ती' का तीसरा काव्य संग्रह है. शीर्षक पढ़ते ही मन प्रेम की स्मृतियों में कहीं खोने सा लगता है. संग्रह की कविताएं प्रेमाभिव्यक्ति में कुछ इस तरह पगी हुई हैं कि अपने शब्दों में अलंकारों, रूपकों और छंदों के किसी विशेष साहित्यिक प्रयोग के बिना भी बड़े ही सरल शब्दों में मन को प्रेम की सहज काव्यानुभूति से सराबोर कर जाती हैं. कवि के ही शब्दों में कहें तो

'प्रेम वह वृष्टि है
जो भिगोकर भी घटने नहीं देती
दिलों से गुनगुना ताप.'
या
'तुम प्यार में हो
मैं भी हूं प्यार में
यह वैसा ही है
जैसे दुनिया का
सबसे बेशकीमती फूल
हमारी हथेलियों में खिला हो.'

सच ही है कि प्रेम में मिलन हो या विरह सभी रूपों में यह हृदय में अपनी उपस्थिति से मनुष्य को पोषित करता है सो यहां भी जनपक्षधर कवि के रूप में राजीव की कविताओं का मूल भाव प्रेम ही है. अपनी कविताओं में कवि का आत्मिक प्रेम में होना तो दिखता है वहीं कविताओं में कहीं-कहीं अकेलापन और एकालाप भी है जो सभी आकांक्षाओं और अपेक्षाओं से मुक्त बस प्रेममय है. किंतु प्रेम की इसी वेदना में पूर्णता भी झलकती है. साथ ही साथ कवि उन कारकों पर भी चिंता व्यक्त करते और अपने विचार रखते हैं जिनसे प्रेम कभी लड़खड़ाता है, घटता या उसका मूल भाव प्रभावित होता है हालांकि इन सभी चिंताओं में कहीं न कहीं त्याग, समर्पण और प्रेम में होना ही महत्वपूर्ण दिखता है न कि प्रेम की आकांक्षा करना. वैसे भी प्रेम समस्त संभावनाओं से अलग अपनी ही दुनिया में विचरण करता है जिसके लिए कवि लिखते हैं कि

'वहां भी प्रेम ही है प्रसारित
जहां उसके होने की
शेष नहीं दिखती कोई भी संभावना'

संग्रह में छोटी बड़ी कुल 81 कविताएं हैं जो प्रेम का एक जादुई संसार रचती हैं जिसमें प्रकृति में व्याप्त विभिन्न घटकों का कवि ने प्रेम के प्रतीकों के रूप में सुंदर प्रयोग किया. संग्रह में प्रेम कविताएं, प्रेम में होना, जब से बंधी है आस, कविता से भेंट, हमारे उच्छ्वास, और चाहिए भी क्या, प्यार बस प्यार तथा कवि चाहता है आदि कविताएं विशेष प्रभावित करती हैं. कविताओं की संवेदना के संदर्भ में कवि का प्रेमी हृदय होना महत्वपूर्ण है, वहीं यह प्रेम तब और अधिक उद्दीप्त और मोहक हो उठता है जब उसे पहाड़ों, झरनों, नदियों यानी प्रकृति का सुंदर सानिध्य मिलता है. तब कवि हृदय के सहज उद्गार उन्हें प्रेम के साक्ष्य के रूप में परिवर्तित कर कविताओं में पिरो देते हैं. ठीक यही भाव इस संग्रह की कविताओं में दिखता है जब कविताएं प्रेम पत्र सरीखी पृष्ठ दर पृष्ठ पाठकों को सम्मोहित करती हुई उनके अपने भोगे हुए प्रेम का संस्मरण कराती चलती हैं.

राजीव पहाड़ों के सानिध्य में रहने वाले कवि हैं सो उनकी कविताओं में प्रेमी प्रेमिकाओं के बीच सहज ही प्रयुक्त होने वाले स्थानीय शब्द आकर्षित करते हैं. शब्दों से परे प्रेम उन्मुक्त है सो कविताएं एक प्रेमी के रूप में कवि की अपने प्रेम के प्रति स्वीकारोक्ति भले दिखाती हों किंतु उन्हें पढ़ते हुए प्रत्येक हृदय उनसे कुछ ऐसा जुड़ जाता है कि एक मधुर स्पंदन महसूसने लगता है. अत: इन कविताओं को पढ़ने के दौरान पाठकों के नेत्र कभी सजल हो उठते हैं तो कभी उनके होंठों पर सलोना सा हास्य उभर आता है. कविताएं कुछ इस तरह अपने आप में समेट लेती हैं कि विगत या वर्तमान प्रेम स्मृतियां कभी गुदगुदाती हैं तो कभी मौन कर देती हैं. यह कला संभवत: इन प्रेम कविताओं में है जो मौन में भी मुखर हो उठती हैं और शोर को संगीत में बदल देती हैं. कुल मिलाकर कविता संग्रह प्रेमी हृदयों के बीच निश्चित रूप से सराही जाएगी और वे इससे जुड़ाव महसूस करेंगे.

(प्रेम में होना - कविता संग्रह, राजीव कुमार 'त्रिगर्ति', प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, इंडिया, राजेन्द्र नगर, गाजियाबाद. पृष्ठ 110, रु .205, ISBN : 978-81-969712-0-5)

लघुकथा के विविध आयाम -एक ज़रूरी किताब

अंजू खरबंदा

'सहज पके सो मीठा होय' जब तक कथ्य सहज रूप से परिपक्व नहीं होगा और शिल्प का अधिकतम परिमार्जन नहीं हुआ होगा, लघुकथा पाठक के हृदय पर विराजेगी कैसे? भेड़ियाधसान प्रवृत्ति से बचने की सलाह देते हुए लेखक रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' ने अपनी बात स्पष्ट रूप से पाठकों के सामने रखी. विराम चिह्न और वर्तनी अशुद्धि पर उन्होंने कड़ाई से बताया ही नहीं, बल्कि चेताया भी.

लघुकथा के विभिन्न आयामों पर लेखक ने जीवन की सार्थकता के दो अनिवार्य सहयोगी घटकों पर बात की है 1 प्रकृति, 2 मानव. अनायास ही अंसार कंबरी की ये पंक्तियां आंखों के आगे तिर आईं

'धूप का जंगल नंगे पांव एक बंजारा करता क्या
रेत के दरिया, रेत के झरने प्यास का मारा करता क्या!'

विकास के नाम पर हम धरती मां को हम कितना नुकसान पहुंचा रहे हैं, पर यह नुकसान क्या केवल धरती मां का है, हमारा नहीं? लेखक ने धरती, वायु, समुद्र, नदी सभी के प्रति चिंता का भाव रखते हुए स्पष्ट संकेत दिया, 'भूमिगत जल के निरंतर घटने और बढ़ते प्रदूषण का कारण एक व्यक्ति नहीं बल्कि पूरा समाज है.'

सुकेश साहनी जी की लघुकथा 'उतार' में गिरते हुए जलस्तर की बात की गई। यह लघुकथा डायरी शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। अमृततुल्य जल को भी जातियों और अमीर गरीब में बांट दिया गया है और अफसोस इस बात का है कि जल के साथ मन भी बंट गए हैं, उतार पर केवल जलस्तर ही नहीं, अपितु हृदय की संवेदनाएं भी उतार पर हैं.

लेखक ने सुकेश साहनी की दूसरी लघुकथा 'विरासत' के बारे में लिखा है कि 2060 की जो परिकल्पना इस लघुकथा में की गई है, वह लोमहर्षक है. दो बूंद जल को तरसते लोग मिलीलीटर में पानी की अहमियत समझेंगे और बूंदबूंद को तरसेंगे.

लेखक ने पर्यावरण पर बात करते हुए कहा कि यह विषय भले ही हमारे पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बन गया है, पर व्यावहारिक रूप में जंगल दिन प्रतिदिन घट रहे हैं. सिर्फ भारत ही नहीं, अपितु अनेक देश जल की विभीषिका से जूझ रहे हैं. समुचित उपाय के अभाव में वर्षा ऋतु के कारण या तो बाढ़ आ जाती है या सूखा पड़ जाता है. हर भगवान चावला की लघुकथा 'खून और पानी' का हवाला देते हुए लेखक ने इस विषय पर गहन चिंता जताई है. अरुण अभिषेक की लघुकथा 'आत्मघात' पर बात करते हुए लेखक ने इसे विडंबना बताया कि जिसकी छांव में बैठकर सुस्ताते हैं, उसी से ऊर्जा लेकर उसी पर टूट पड़ते हैं. कम शब्दों में रची गई यह लघुकथा चेताती है कि जिस तरह से हम पेड़ों की अंधाधुंध कटाई कर रहे हैं, बिना यह सोचे कि हम आत्मघाती बन अपना ही नुकसान कर रहे हैं, अब न संभले, तो फिर कभी नहीं संभलेंगे.

आनंद हर्षुल की लघुकथा 'बच्चों की आंखें' का हवाला देते हुए लेखक ने आज के बच्चों का मोबाइल फोन के प्रति मोह पर करारा तंज कसा है. बगीचे में बैठे बच्चे मोबाइल में इतने व्यस्त हैं कि उन्हें पेड़पौधे, तितलियां, चिड़िया कुछ दिखाई नहीं दे रहा. फूल दुखी है कि उनके लिए नहीं है बच्चों की आंखें. संसाधन हमारी जरूरत की आपूर्ति करने के बजाय बच्चों का बचपन ही डकार जाए, तो ऐसे संसाधन हमारे किस काम के?

कमल कपूर की लघुकथा 'सपनों के गुलमोहर' उनके वृक्षों के प्रति प्रेम को दर्शाती लघुकथा है. इसमें लेखिका ने अपने गुलमोहर प्रेम को लघुकथा के माध्यम से जीवंत किया है. यहां लेखक ने बहुत सुंदर बात कही 'प्रकृति का संरक्षण तभी संभव है जब मानव इसे जीवन का अनिवार्य और अपरिहार्य अंग मानकर अनुपालन करें.'

डॉ. कविता भट्ट की लघुकथा 'कुलच्छन' के बारे में लेखक ने कड़े शब्दों में पाखंड का विरोध दर्ज करते हुए कहा है कि आचार्य स्वयं तो पाखंडपूर्ण व ऐशोआराम का जीवन जीते हैं, दूसरी ओर भोलीभाली जनता को मूर्ख बनाते हैं. लेखक ने मनुस्मृति के एक श्लोक का सुंदर उदाहरण देते हुए समझाया है कि जल से शरीर के अंग शुद्ध होते हैं, सत्य का आचरण करने से मन शुद्ध होता है, विद्या और तप से प्राणी की आत्मा तथा बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है, परंतु कुछ लोग केवल शारीरिक शुद्धि को ही स्वर्ग प्राप्ति तथा पुण्य प्राप्ति का साधन समझ बैठते हैं.

सत्या शर्मा 'कीर्ति' की लघुकथा 'फटी चुन्नी' पर बात रखनी बेहद जरूरी है. बुआ के घर आई सीमा के कौमार्य को खंडित करने वाला कोई और नहीं बल्कि फूफा ही है. बुआ के लाख पूछने पर भी वह अपनी उदासी का कारण नहीं बता पाई, ताकि बुआ का घर न टूटे. महिलाओं की सोचनीय स्थिति को यहां दर्शाया गया है.

महेश शर्मा की लघुकथा 'लव जेहाद' उल्लेखनीय है. मातृत्व का आत्मीय स्पर्श मां और बच्चे दोनों के लिए आत्मीय शक्ति है. इस विषय पर रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' की लघुकथा 'खूबसूरत' की बात करना लाज़िमी है. स्त्री चाहे विश्व सुंदरी हो या कोई मॉडल, घर को घर बनाकर रखने वाली स्त्री ही सभी की चहेती कहलाती है. विजय की पत्नी को देख उसका दोस्त सोचता है कि वही विजय है जिस पर कॉलेज की लड़कियां मरती थीं. पर जब विजय से अपनी पत्नी का परिचय करवाते हुए गर्व से कहा 'यह है मेरी पत्नी सविता' तब विजय के दोस्त को एहसास हुआ कि यह दुनिया की सबसे खूबसूरत महिला है.

जल, नदी, पेड़-पौधे, समुद्र, पर्यावरण, आडंबर, धर्म, ममता सभी विषयों को इस पुस्तक में समेटा गया है. लेखक ने मोती चुनकर इस पुस्तक रूपी माला में पिरोए है जिससे यह पुस्तक अनमोल बन पड़ी है.

(लघुकथा के विविध आयाम (कथ्य एवं शिल्प): रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', पृष्ठ:165, मूल्य: 310, प्रथम संस्करण 2024, प्रकाशक: प्रवासी प्रेस पब्लिशिंग प्राइवेट लिमिटेड - भारत, राजेन्द्र नगर, गाजियाबाद 201005)

सामाजिक और संवैधानिक मूल्यों की समझ बनाती पुस्तक

पूजा सिंह

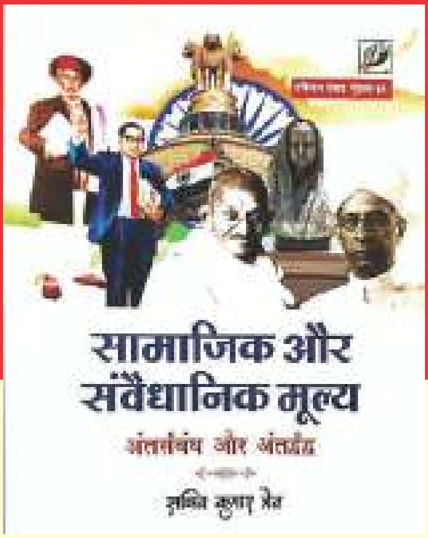

सचिन कुमार जैन की पुस्तक 'सामाजिक और संवैधानिक मूल्य: अंतर्संबंध और अंतर्द्वंद्व' सरल भाषा में मूल्यों के आपसी संबंध और उनके बीच के द्वंद्व को समझाती है. यह मूल्यों को लेकर समझ बनाने वाली एक जरूरी पुस्तक है.

मानव समाज कुछ मूल्यों से संचालित होता है. हर दौर में समाज कुछ तय मूल्यों पर आधारित रहे हैं. ये मूल्य आम लोगों के सौहार्दपूर्ण सहअस्तित्व का सूत्र रहे हैं. बाद में कई मूल्यों ने ऐसी रुढ़ियों या परंपराओं का रूप ले लिया जिन्होंने समाज पर विपरीत असर डाला. संवैधानिक मूल्यों ने ऐसी विसंगतियों को दूर किया है. सचिन कुमार जैन की पुस्तक 'सामाजिक और संवैधानिक मूल्य: अंतर्संबंध और अंतर्द्वंद्व' इन दोनों मूल्यों के जटिल और परस्पर निर्भरता वाले संबंधों को पारदर्शी ढंग से पाठकों के समक्ष रखती है.

पुस्तक के पहले भाग में उन्होंने सामाजिक मानकों और रुढ़ियों को स्पष्ट करते हुए मूल्यों को परिभाषित किया है. वह धर्म सूत्रों के हवाले से तत्कालीन मूल्यों को परिभाषित करने का प्रयास करते हैं. इसके बाद वह जैन और बौद्ध दर्शनों में उल्लिखित मूल्यों की व्याख्या करते हैं. वह भक्ति आंदोलन के सहारे आगे बढ़ते हुए उन चुनौतियों का जिक्र करते हैं जो समय के साथ सामाजिक व्यवस्था और सामाजिक मूल्यों के समक्ष उपस्थित होने लगी थीं. इनमें जाति व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, जाति विभाजन आदि प्रमुख हैं.

वह धर्म और स्त्री जैसे महत्वपूर्ण विषय को उठाते हुए 'स्तन कर' की अमानवीय परंपरा का उल्लेख करते हैं. इसी भाग में वह रुकैय्या बेगम की दास्तान के माध्यम से स्त्री शिक्षा के संघर्ष को भी रेखांकित करते हैं. इस हिस्से में वह अयोथी थास, सावित्री बाई फुले और जोतिबा फुले एवं ताराबाई शिंदे आदि के जीवन संघर्ष के माध्यम से तत्कालीन सुधारवादी प्रयासों के बारे में भी बताते हैं.

दूसरे भाग में लेखक ने भारतीय संविधान, संवैधानिक नैतिकता और व्यवस्था के व्यवहार के साथ संवैधानिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है. लेखक के मुताबिक प्रेम, न्याय, बंधुता और स्वतंत्रता जैसे संवैधानिक मूल्य बुनियादी तौर पर सामाजिक मूल्य ही हैं. उन्होंने कई धर्म सूत्रों का विस्तृत विश्लेषण किया है जिनके बारे में माना जाता है कि हमारे सामाजिक मूल्य वहीं से उत्पन्न हुए. वह महोपनिषद के छठवें अध्याय के 71वें श्लोक का उल्लेख करते हैं :

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम,
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम.

यानी ''यह मेरा है यह मेरा नहीं है इस तरह का विचार छोटे चित्त के लोग रखते हैं, उदार हृदय वाले लोगों के लिए तो पूरी पृथ्वी ही परिवार है.'' यह श्लोक न्याय, समता, बंधुता और स्वतंत्रता जैसे मूल्यों को स्पष्ट करता है.

वह गौतम बुद्ध के हवाले से मैत्री और करुणा जैसे मूल्यों की बात करते हैं. जैन धर्म के प्रतिक्रमण के सिद्धांत को स्पष्ट करते हुए वह बताते हैं कि यह पीछे लौटकर या अतीत में जाकर अपने व्यवहार पर नजर डालने की बात कहता है. यह कहता है कि यदि कोई हमारे साथ गलत करता है तो हमें पलटकर उसके साथ गलत व्यवहार नहीं करना है. यह भी एक सकारात्मक मूल्य ही तो है.

पुस्तक बताती है कि भक्ति आंदोलन ने ऊंचनीच, जातिवाद जैसी सामाजिक बुराइयों का भी खुलकर विरोध किया. भक्ति काल ने समानता, प्रेम, सह अस्तित्व और व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसे मूल्यों पर जोर दिया. समय के साथ धार्मिक परंपराओं में कई विकृतियां जुड़ गयीं जो शर्मनाक थीं. देवदासी और सती प्रथा, स्तन कर, मानव द्वारा मल निस्तारण आदि ऐसी ही प्रथाएं हैं जिन्हें सामाजिक मान्यता प्राप्त थी.

देवदासी और सती प्रथा या स्तन कर प्रथा जैसी रुढ़िवादी परंपराओं ने महिलाओं को ही प्रभावित किया. इससे मुक्ति की एक मात्र राह स्त्री शिक्षा और जागरूकता की थी और यह बीड़ा उठाया रुकैय्या बेगम, फातिमा शेख, सावित्रीबाई फुले और जोतिबा फुले जैसे सुधारकों ने.

संवैधानिक मूल्यों की सबसे बड़ी खासियत उनका सार्वभौमिक होना है. संविधान की उद्देशिका हमारे संवैधानिक मूल्यों का उद्घोष करती है और कहती है कि हर व्यक्ति को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय प्राप्त होगा, उसकी गरिमा का ध्यान रखा जाएगा और बंधुता को बढ़ावा दिया जाएगा. दूसरे भाग में लेखक ने उद्देशिका में दर्ज 12 शब्दों के माध्यम से संवैधानिक मूल्यों को परिभाषित किया है. लेखक ने संवैधानिक मूल्यों और संवैधानिक अधिकारों को अलगअलग परिभाषित करके सराहनीय काम किया है.

अंतिम अध्याय में लेखक ने संवैधानिक भरोसे को परिभाषित किया है. बीते कुछ समय में देशवासियों के बीच जिस तरह के अविश्वास का माहौल निर्मित हुआ है, उसमें संवैधानिक भरोसे के बारे में विस्तृत अध्ययन समझ बढ़ाने वाला है. यह पुस्तक सामाजिक और संवैधानिक मूल्यों को लेकर सही समझ देने के साथ पाठकों को सजग और सुचिंतित नागरिक बनने में मदद करेगी. सरल-सहज भाषा में लिखी यह पुस्तक हर वर्ग के पाठकों के लिए सहज ही पठनीय है. अलग-अलग कालखंड की उल्लेखनीय घटनाओं का जिक्र पाठकों को पुस्तक के साथ बांधे रखने में सफल है.

(पुस्तक : सामाजिक और संवैधानिक मूल्य अंतर्संबंध और अंतर्द्वंद्व : लेखक : सचिन कुमार जैन, पृष्ठ संख्या : 114, मूल्य : 315 रुपये, प्रकाशक : प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, भारत, राजेन्द्र नगर, गाजियाबाद 201005)

शार्ट फिल्म : यादों में गणगौर

(29 मिनट/डॉक्यूमेंट्री/हिन्दी, पटकथा, निर्माण व निर्देशन : सुदीप सोहनी, छायांकन : अशोक कुमार मीणा, सम्पादन : वैभव सावंत ध्वनि : उमेश तरकसवार)

भारत परंपराओं, रीतिरिवाजों और त्योहारों का देश है. गांवों ने मिट्टी की ख़ुशबू को बचा कर रखा है और उसे पीढ़ियों तक हस्तांतरित किया है. गणगौर ऐसा ही एक लोक पर्व है जो पश्चिमोत्तर भारत में मनाया जाता है. यह फिल्म मध्य प्रदेश के खंडवा ज़िले के कालमुखी गांव के पारंपरिक गणगौर अनुष्ठान का चित्रण है जहां यह परंपरा 100 वर्षों से भी अधिक समय से चली आ रही है. इस लोक उत्सव का फिल्मांकन एक यात्रा से शुरू होता है जो अंततः विरासत, परंपराओं, और रीति रिवाजों को सहेजने के बहाने मासूमियत और कृतज्ञता ज्ञापित करने वाले उत्सव के अनुभव में बदल जाता है. यह फिल्म सच्चे अर्थों में भारतीय लोक संस्कृति के भीतर छुपे मंतव्यों की पड़ताल करती है जो लोगों और समाज में गहरी जड़ें जमाए हुए हैं. यह एक ऐसे लोक पर्व का फिल्मांकन है जो सदियों से परंपरा को पोसता हुआ उसे एक विरासत में परिवर्तित कर देता है और मिट्टी और फसलों के संबंध का उत्सव मनाता है.

गांव देहात की लोक परम्पराएं किस तरह समय के साथ एक सांस्कृतिक यात्रा और इतिहास बन जाती हैं यह फ़िल्म उसी की यात्रा करती है. इस दौरान बहुत कुछ बदला है. बहुत से लोग इस दुनिया में नहीं हैं. गांव की पिछले 100 सालों की पारंपरिक व्यवस्था का इतिहास इस फ़िल्म में दर्ज है और व्यक्तिगत होते हुए भी यह सामाजिक दायरे को दिखाती है. साल 2015 में खंडवा के पास स्थित ननिहाल कालमुखी में पिछले सौ वर्षों से जारी गणगौर अनुष्ठान के दरमियान इसके फिल्मांकन का ख्याल मुझे आया और फिर अगले दो वर्षों तक गणगौर पर्व के समय हमने इसका फिल्मांकन किया जिसमें पारंपरिक अनुष्ठान के अतिरिक्त जमुना देवी उपाध्याय, वसंत निर्गुणे, संजय महाजन, विनय उपाध्याय, आलोचना मांगरोले समेत ग्रामीण व लोक कलाकारों के साक्षात्कार, गणगौर के गीत और गांव की परंपरा का फिल्मांकन किया गया है. अंग्रेजी में इसे 'रीमिनिसेंस ऑफ़ गणगौर' के नाम से दिखाया जाएगा.

29 मिनट की इस फ़िल्म की पटकथा, निर्माण, व निर्देशन व पटकथा सुदीप सोहनी का है जबकि फिल्मांकन अशोक मीणा व सम्पादन वैभव सावंत ने किया है. फ़िल्म में ध्वनि परिकल्पना संगीतकार उमेश तरकसवार ने की है. यह फिल्म इस समय दुनिया भर के अलग अलग समारोहों में दिखाई जा रही है. मार्च 2024 में फिल्म त्रिनिदाद और टोबेगो के पोर्ट ऑफ स्पेन में 6वें फिल्म एंड फोकलोर फेस्टिवल में दिखाई जा रही है. इसके बाद आगामी 1419 मई 2024 को फिल्म का प्रदर्शन अमेरिका के ओरेगॉन प्रांत के यूजीन शहर में होने वाले 20वें अंतर्राष्ट्रीय आर्कियोलॉजिकल फेस्टिवल में होगा. इसके पहले बीते अगस्त में 14वें शिकागो साउथ एशियन अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह, शिकागो (अमेरिका), 7वें चलचित्रम अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह (गुवाहाटी), 9वें शिमला अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह, (शिमला) और 7वें अंतर्राष्ट्रीय लोकगाथा फिल्म समारोह, त्रिस्सूर (केरल) में फिल्म का प्रदर्शन हो चुका है.

परिचय : सुदीप सोहनी

भारतीय फिल्म एवं टेलीविज़न संस्थान, पुणे के छात्र रहे सुदीप सोहनी मध्य भारत में स्वतंत्र सिनेमा (Indie filmmaking) के क्षेत्र में काम करने और विभिन्न रचनात्मक कार्यों से जुड़े कलाकारों को संगठित रूप से जोड़ने की पहल करने वाले युवाओं में जानापहचाना नाम हैं. कवि, पटकथा लेखक, निर्देशक, परिकल्पक व सलाहकार के रूप में सुदीप का कार्यक्षेत्र सिनेमा, रंगमंच, साहित्य, व संस्कृतिकर्म तक फैला है. फिल्मों में आने से पहले उन्होंने विभिन्न एजेंसियों के साथ काम करते हुए विज्ञापन में एक कॉपीराइटर के रूप में अपनी यात्रा शुरू की. उनकी पहली लघु फिल्म '#itoo (2019)', डॉक्यूमेंट्री फीचर 'तनिष्का (2022)' और डॉक्यूमेंट्री शॉर्ट 'रेमिनिसेंस ऑफ गणगौर (2023)' को भारत, अमेरिका, वेस्टइंडीज, यूरोप और बांग्लादेश सहितविभिन्न राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोहों में सराहना और पहचान मिल रही है. देश के कई शिक्षा संस्थानों में सिनेमा पाठयक्रम निर्माण और सिने कार्यशालाओं में हिस्सेदारी. फ़िल्म हेरिटेज फाउंडेशन, मुंबई द्वारा वर्ष 2018 की प्रतिष्ठित वर्ल्ड फ़िल्म रिस्टोरेशन कार्यशाला, कोलकाता में बतौर पर्यवेक्षक हिस्सेदारी. विश्वरंग अंतर्राष्ट्रीय फिल्म फेस्टिवल, भोपाल 2020 व 2021 के निदेशक तथा स्क्रीनराईटर्स असोसिएशन, मुंबई के गत तीन वर्ष सम्पन्न हुए अवार्ड्स के प्रीजूरी पैनल में नामित. एक कविता संग्रह 'मंथर होती प्रार्थना (2023)' और एक मोनोग्राफ 'साहित्य, सिनेमा और समय (2019)' प्रकाशित है. नर्मदा भवन ट्रस्ट, इंदौर (म.प्र.) का युवा गौरव सम्मान (2016), सिनेमा पर श्रेष्ठ लेखन के लिए म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 'पुनर्नवा सम्मान' (2018). रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय भोपाल द्वारा जूनियर टैगोर फ़ेलोशिप (2019). सिने समालोचना के लिए प्रथम विष्णु खरे स्मृति सम्मान (2022). विगत वर्षों में कान फ़िल्म समारोह (फ्रांस) तथा भारतीय अंतर्राष्ट्रीय फ़िल्म समारोह (इफ़्फ़ी) के लिए बतौर फ्रीलान्सर फ़िल्म क्रिटिक संबद्धता प्राप्त. इन दिनों भोपाल (म.प्र.) में रहते हैं और सुदीप सोहनी फिल्म्स के तहत स्वतंत्र फिल्म निर्माण कर रहे हैं और कई टेलीविज़न चैनल्स के लिए बतौर कॉन्सेप्चुएलाइसर कार्य कर रहे हैं.

संपर्क : sudeepsohnifilms@gmail.com

SELLING

BUYING

OR

"Making your REALTY dreams a REALITY"

PROVIDING PREMIUM SERVICE IN REAL ESTATE

Dharmendra Gomber
Mobile: 0212318123
DDI: 2155767

Neeta Gomber
Mobile: 0211001256
Email: d.gomber@barfoot.co.nz

BARFOOT & THOMPSON
BLOCKHOUSE BAY
(09) 627 8325

UNLOCK
YOUR FINANCIAL POTENTIAL
with Global Finance

global finance

Winner of 50+ industry awards

We're the Piece that allows you to navigate Your Finances with Ease and Provide Comprehensive Solutions for Mortgages, Personal Risk Insurance, Business, and Commercial Loans.

Join Global Finances' referral campaign for a chance to win a share of $4000 worth of travel! This is your opportunity to travel, create unforgettable memories and share amazing experiences with your loved ones.

The first prize is a whopping $2500 worth of travel, the second prize is $1000 worth of travel, and the third prize is $500 worth of travel.

Not only are you entered to win a share of the prize pool, if your referrals convert to successful for GFS business, you'll also receive $250 for every referral*.

HOW CAN YOU PARTICIPATE?

Its easy! Simply refer Global Finance to your friends and family before 30th November 2023. The more people you refer, the higher your chances of winning.

1st PRIZE	2nd PRIZE	3rd PRIZE	$250
$2500 travel gift card	$1000 travel gift card	$500 travel gift card	per *Referral per Customer T&C's apply

Contact:

NORTH SHORE BRANCH

9C Apollo Drive, Rosedale

P | 09 255 5591
M | 027 755 5531

E | info@globalfinance.co.nz
W | www.globalfinance.co.nz

www.pppublishingindia.press

प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग प्रा.लि., भारत

(एम.एस.एम. ई.,भारत सरकार के अंतर्गत पंजीकृत)

बहुभाषी प्रकाशन संस्थान

- *हिंदी, अंग्रेजी सहित सभी भारतीय भाषाओं में गुणवत्तापूर्ण पुस्तकों के प्रकाशक*
- *भारत की विभिन्न आदिवासी और लोक-बोलियों में अनुवाद का कार्य*
- *लेखकों को रायल्टी के भुगतान का प्रावधान*
- *पुस्तकों के व्यापक प्रचार-प्रसार व बिक्री की व्यवस्था*
- *विदेश में रहने वाले प्रवासी लेखकों के लिए विशेष योजनाएँ*

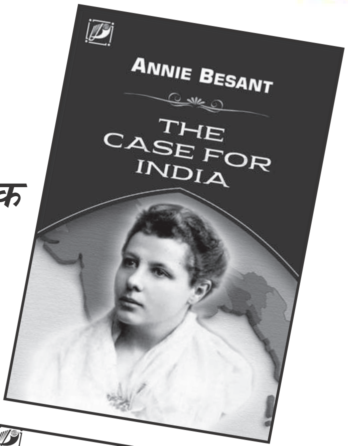

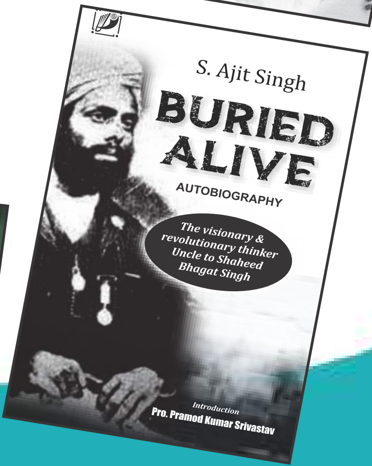

संपर्क

pravasiprempublishing@gmail.com　　91-7827310876